मासिक समाचारपत्र ● पूर्णांक 41 ● वर्ष 5 ● अंक 2 ● अप्रैल 2015 ● पाँच रुपये ● 16 पृष्ठ

मज़दूर बिगुल

यमन: इस्लामिक राजतंत्र और अमेरिकी साम्राज्यवाद के गँठजोड़ से मौत का तांडव 5

दिल्ली सचिवालय के बाहर मज़दूरों पर बर्बर लाठी चार्ज की घटना का पूरा ब्यौरा
हम हार नहीं मानेंगे! हम लड़ना नहीं छोड़ेंगे! 8

मज़दूरों के सबसे बुरे दुश्मन लफ़्फ़ाज़ 14

मज़दूर वर्ग का नया शत्रु और पूँजीवाद का नया दलाल–अरविन्द केजरीवाल

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में मज़दूर वर्ग के आन्दोलन के कुछ ज़रूरी राजनीतिक कार्यभार

हमने पिछले अंक में स्पष्ट किया था कि 'आम आदमी पार्टी' मज़दूरों की मित्र नहीं है। हमने यह नतीजा 'आम आदमी पार्टी' और उसके नेता अरविन्द केजरीवाल के चुनावी घोषणापत्रों और बयानों से निकाला था। तब अरविन्द केजरीवाल की सरकार को बने कुछ दिन ही हुए थे। तब अरविन्द केजरीवाल की सरकार की ठोस कार्रवाइयों के आधार पर यह नतीजा निकालना सम्भव नहीं था। लेकिन पूँजीवादी समाज के भीतर हर पार्टी, हर नेता, हर विचारक किसी न किसी वर्ग की विचारधारा की नुमाइन्दगी करता है और इस वर्ग विचारधारा के विश्लेषण के आधार पर हम उस व्यक्ति, दल, नेता या विचारक की वर्ग पक्षधरता के बारे में कुछ आम नतीजे निकाल सकते हैं। अरविन्द केजरीवाल और 'आम आदमी पार्टी' की राजनीति और विचारधारा की चीर-फाड़ करते हुए हमने पिछली बार स्पष्ट किया था कि 'आम आदमी-आम आदमी' की रट लगाने, 'सदाचार और ईमानदारी' का ढोल बजाने के बावजूद इस दल की विचारधारा और राजनीति विशेष तौर पर छोटे और मँझोले लेकिन साथ ही बड़े पूँजीपतियों, मालिकों, ठेकेदारों, दलालों, बिचौलियों, दुकानदारों और व्यापारियों की सेवा करती है। लेकिन बहुत से लोग विचारधारा और राजनीति के विश्लेषण से सन्तुष्ट नहीं होते और वे ठोस कार्रवाइयों के आधार पर फैसला करने का इन्तज़ार करते हैं। अब उन लोगों के लिए भी फैसला करना आसान हो गया है। वैसे तो अभी अरविन्द केजरीवाल सरकार को दो महीने पूरे हुए हैं, लेकिन जैसी कि कहावत है, 'पूत के पाँव पालने में नज़र आते हैं'।

केजरीवाल सरकार के दो महीने: पूत के पाँव पालने में नज़र आ रहे हैं!

पिछले दो महीनों में अगर केजरीवाल सरकार के काम-काज की बात करें तो एक बात स्पष्ट हो जाती है: बेशक इस सरकार ने काम किया है! सवाल यह है कि किसके लिए किया है? क्या केजरीवाल सरकार ने पिछले 2 माह में दिल्ली के मज़दूरों और आम मेहनतक़श आबादी के लिए कुछ किया है? अगर किया है तो क्या किया है? पिछले दो महीनों के दौरान केजरीवाल सरकार के कामकाज पर थोड़ा क़रीबी निगाह डालने पर वही नतीजे निकलते हैं जो कि 'आम आदमी पार्टी' की राजनीति और विचारधारा के विश्लेषण से पिछले सम्पादकीय अग्रलेख में हमने निकाले थे। इन्हें हम संक्षेप में हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं।

सम्पादक मण्डल

दिल्ली सचिवालय पर 25 मार्च को हुए पहले लाठीचार्ज के बाद फिर इकट्ठा हुए मज़दूरों की सभा। घण्टों इन्तज़ार करने के बाद जब मज़दूर सचिवालय की ओर बढ़े तो फिर उन पर बर्बर हमला कराया गया

केजरीवाल सरकार ने पिछले दो महीने में पूँजीपतियों, ठेकेदारों और दुकानदारों के लिए क्या किया?

1. पर्यावरण को तबाह करने की पूँजीपतियों को खुली छूट

पिछले दो माह में केजरीवाल अपनी पार्टी के भीतर मची भेड़ियाधँसान में फँसे होने की बजाय बड़ी मेहनत के साथ दिल्ली के मालिकों, ठेकेदारों और दलालों की सेवा में लगा रहा है। सरकार बनाते ही अरविन्द केजरीवाल ने अपने वायदे के मुताबिक दिल्ली के कारखाना मालिकों और धन्नासेठों के लिए 'धन्धा लगाना और चलाना आसान बना दिया।' पहला काम तो केजरीवाल सरकार ने यह किया कि दिल्ली के पूँजीपतियों के लिए कारखाना लगाने और चलाने की प्रक्रिया को आसान बना दिया। इसके लिए कुछ विशिष्ट कारखानों के लिए पर्यावरणीय क्लियरेंस लेने की पूर्वशर्त को अरविन्द केजरीवाल ने समाप्त कर दिया। इससे तमाम कारखाना मालिकों के लिए दिल्ली में बिना रोक-टोक कारखाना लगाना आसान हो गया। अभी हाल ही में पता चला है कि दिल्ली में प्रदूषण ख़तरे के स्तर से ऊपर चला गया है। बताने की आवश्यकता नहीं है कि बढ़ते प्रदूषण का असर सबसे ज़्यादा ग़रीब आबादी पर पड़ता है क्योंकि वह पर्यावरणीय तौर पर पूरी तरह से अरक्षित है। अरविन्द केजरीवाल की सरकार ने पर्यावरणीय क्लियरेंस की शर्त को हटाकर कारखानेदारों को दिल्ली की आबो-हवा में खुलकर ज़हर घोलने की आज़ादी दे दी है।

2.'ओ जी, मैं तो बनिया हूँ। धन्धा मेरे ख़ून में है।'

चुनाव के पहले ये अरविन्द केजरीवाल की ही घोषणा थी! इसकी भावना पर अमल करते हुए अरविन्द केजरीवाल ने दिल्ली के व्यापारियों के लिए वैट का सरलीकरण कर दिया है। इसका सबसे ज़्यादा फ़ायदा दिल्ली के व्यापारियों को पहुँचेगा। 2 फरवरी को व्यापारियों के कई समूह दिल्ली सचिवालय पहुँचे और केजरीवाल सरकार पूँछ हिलाते हुए उनसे मिलने आयी। इसके तुरन्त बाद केजरीवाल सरकार ने दिल्ली के शहर के ऐसे व्यापारियों के लिए ऑडिट रिपोर्ट-1 जमा करने की पूर्वशर्त ख़त्म कर दी

(पेज 11 पर जारी)

हम हार नहीं मानेंगे! हम लड़ना नहीं छोड़ेंगे!

केजरीवाल सरकार के आदेश पर 25 मार्च 2015 को दिल्ली सचिवालय के बाहर मज़दूरों पर बर्बर लाठी चार्ज की घटना का पूरा ब्यौरा

बजा बिगुल मेहनतकश जाग, चिंगारी से लगेगी आग!

किसानों के जनवादी अधिकारों पर तीखा हमला

पेज 16 से आगे)

जानकारी या दस्तावेज पेश हुआ है उसी पर कार्यवाही की जायेगी। इस तरह बड़े अफसरों को बचाने का पुख्ता इंतजाम कर दिया गया है।

मूल अध्यादेश में संशोधन करके लोक सभा में पारित अध्यादेश में यह जोड़ा गया कि आदिवासियों की भूमि अधिग्रहित करने के लिए पंचायतों की सहमति ज़रूरी होगी। पहली बात तो यह कि सहमति भूमि मालिक की ज़रूरी होनी चाहिए न कि पंचायत की। दूसरी बात यह कि सरपंचों-पंचों को खरीद कर उनकी सहमति लेना कौन सी मुश्किल बात है?

कानून में भूमि मकान मालिकों को मुआवजे, पुनर्वास, सामाजिक प्रभावों के मुताबिक कार्यवाही, सार्वजनिक सुनवाई आदि की चाहे जितनी मर्ज़ी बातें हों लेकिन वास्तव में जनता को भयंकर तबाही का सामना करना पड़ता है। मुआवजे, रिहायश-रोजगार आदि के लिए उनको दर-दर की ठोकरें झेलनी पड़ती हैं। पूँजीवादी सरकारें सिर्फ कहने में ही इसकी गारण्टी दे सकती हैं। हकीकत में सरकारों को जनता की कोई परवाह नहीं होती। ऐसी गारण्टी समाजवाद के दौरान ही हो सकती है जहाँ आर्थिक-राजनीतिक व्यवस्था के केन्द्र में मुनाफा नहीं बल्कि मानव होता है। पूँजीवादी सरकारें चाहे भूमि अधिग्रहण ''सार्वजनिक हित'' का बहाना बनाकर करती हैं लेकिन वास्तव में इसका निशाना किसी न किसी रूप में पूँजीपति वर्ग को फायदा पहुँचाना ही होता है। ऐसी भी अनेक उदाहरण दी जा सकती हैं कि ''सार्वजनिक हित'' के लिए सरकारों ने जो भूमि अधिग्रहण की उसके लिए इस्तेमाल ही नहीं की गई। ऐसे काफी मामले हैं जिनमें सरकारों के द्वारा कौड़ियों के भाव भूमि हासिल करके पूँजीपतियों ने आगे महँगे भाव में बेच डाली। उजाड़े का शिकार हुई जनता को रोज़गार देने के जो वायदे किये गए वह झूठे निकले। वातावरण को नुक्सान न पहुँचाने की जो बातें कही गई वे हवाई निकलीं। सरकारी तंत्र और पूँजीपतियों की साँठगाँठ से जनता के साथ धोखाधड़ी, लूट-मार के बयौरे लम्बे लेख की माँग करते हैं। यहाँ हम बस इतना कहना चाहेंगे कि जनता के हित के जिन दावों-वायदों के नाम पर जनता की जमीनें छीनीं जाती हैं, जनता की रिहायश और रोज़गार की बर्बादी की जाती है, वे झूठ से सिवा और कुछ नहीं होते। पूँजीवादी व्यवस्था में जमीन अधिग्रहण कानूनों का मकसद पूँजीपतियों के लिए बड़े स्तर पर, कम समय में और सस्ती कीमत पर जनता से जमीन छीन कर देना होता है। यही कुछ मोदी सरकार भी कर रही है, लेकिन पहली सरकारों से कहीं बड़े स्तर पर और उससे कहीं ज्यादा दमनकारी रूप में।

मोदी को पूँजीपति वर्ग ने पूरा जोर लगा कर प्रधानमंत्री की कुर्सी तक इसीलिए पहुँचाया है कि इसको मोदी से उम्मीद थी कि आर्थिक मन्दी के इस दौर में वह उदारीकरण-निजीकरण की नीतियों को इससे पहले की सरकारों से कहीं अधिक तेज़ी और सखती के साथ आगे बढ़ायेगा। मोदी ने यह काम पहले गुजरात में कर दिखाया और अब प्रधानमंत्री बनकर पूरे देश में कर रहा है। मोदी का सब से बड़ा निशाना मज़दूर वर्ग के श्रम की लूट को बढ़ाने का प्रबन्ध करना है। इसके लिए वह श्रम कानूनों और कम्पनी कानूनों में भारी बदलाव कर रहा है। सरकारी संस्थानों का बड़े स्तर पर निजीकरण कर रहा है। दूसरा उसका निशाना इस देश के किसान हैं जिन में बड़ी संख्या गरीब और मँझोले किसानों की है। मोदी से देसी-विदेशी पूँजीपतियों को बड़ी आशा है कि वह उनके लिए सस्ते से सस्ते, कम से कम समय में बड़े स्तर पर भूमि जनता से छीन कर उनको दिलाएगा। मोदी उनकी उम्मीदों पर पूरा उतरने की ही कोशिशों में लगा है। 'वाजिब मुआवजे का अधिकार और भूमि अधिग्रहण और पुनर्वास में पारदर्शिता के बारे में (संशोधन) अध्यादेश-2014' मोदी की ऐसी ही एक कोशिश है।

जहाँ शोषण व दमन है वहाँ प्रतिरोध भी होता है। बड़े से बड़ा दमनकारी भी इस हकीकत को नहीं बदल सकता। काले कानून, जेलें, बम, गोलियों की बौछार भी जनप्रतिरोध को खत्म नहीं कर सकती। मोदी सरकार द्वारा जनता-किसानों की जमीनें छीनने की नीति भी बेरोकटोक आगे नहीं बढ़ेगी और न ही बढ़नी चाहिए। जनता को मोदी सरकार के इस गैरजनवादी -फासीवादी हमले के खिलाफ डटकर लड़ाई लड़नी होगी।

- लखविन्दर

मज़दूर बिगुल यहाँ से प्राप्त करें :

दिल्ली : मज़दूर पाठशाला, बी-100, मुकुन्द विहार, करावल नगर (योगेश) 09289498250; वज़ीरपुर (सनी) 09873358124; शहीद भगतसिंह लाइब्रेरी, ए ब्लॉक, शाहबाद डेयरी, फ़ोन - 09971158783
गाज़ियाबाद-नोएडा : (तपीश) 9654077902
गुड़गाँव : (अजय) 09540436262, (राजकुमार) 09919146445
लुधियाना : मज़दूर पुस्तकालय, राजीव गाँधी कालोनी, फ़ोकल प्वाइण्ट थाने के पास, फ़ोन - 09646150249 ● चण्डीगढ़ : (मानव) 09888808188
लखनऊ : जनचेतना, डी-68, निराला नगर, फ़ोन - 0522-2786782, (सत्यम) 08853093555
गोरखपुर : जनचेतना, 114, जनता मार्केट, रेलवे बस स्टेशन रोड, फ़ोन - 08738863640
इलाहाबाद : (प्रसेन) 08115491369 ● पटना : (विशाल) 09576203525
सिरसा : डॉ. सुखदेव हुन्दल की क्लिनिक, सन्तनगर, फ़ोन - 09813192365
मुम्बई : नारायण, रूम नं. 7, धनलक्ष्मी कोआपरेटिव हाउसिंग सोसायटी, प्लाट नं. बी-6, सेक्टर 12, खारघर, नवी मुम्बई, फ़ोन - 09619039793

मज़दूर बिगुल के लिए अपने कारख़ाने, दफ़्तर या बस्ती की रिपोर्टें, लेख, पत्र या सुझाव आप इन तरीक़ों से भेज सकते हैं:

डाक से भेजने का पता : **मज़दूर बिगुल, द्वारा जनचेतना, डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020**

ईमेल से भेजने का पता : **bigulakhbar@gmail.com**

"बुर्जुआ अख़बार पूँजी की विशाल राशियों के दम पर चलते हैं। मज़दूरों के अख़बार ख़ुद मज़दूरों द्वारा इकट्ठा किये गये पैसे से चलते हैं।" – लेनिन

'मज़दूर बिगुल' मज़दूरों का अपना अख़बार है।
यह आपकी नियमित आर्थिक मदद के बिना नहीं चल सकता।
बिगुल के लिए सहयोग भेजिये/जुटाइये।
सहयोग कूपन मँगाने के लिए मज़दूर बिगुल कार्यालय को लिखिये।

मज़दूर बिगुल की वेबसाइट
www.mazdoorbigul.net

इस वेबसाइट पर दिसम्बर 2007 से अब तक बिगुल के सभी अंक क्रमवार उससे पहले के कुछ अंकों की सामग्री तथा राहुल फ़ाउण्डेशन से प्रकाशित सभी बिगुल पुस्तिकाएँ उपलब्ध हैं। बिगुल के प्रवेशांक से लेकर अब तक के सभी अंक वेबसाइट पर क्रमशः उपलब्ध कराये जा रहे हैं।

मज़दूर बिगुल का स्वरूप, उद्देश्य और ज़िम्मेदारियाँ

1. 'मज़दूर बिगुल' व्यापक मेहनतकश आबादी के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक शिक्षक और प्रचारक का काम करेगा। यह मज़दूरों के बीच क्रान्तिकारी वैज्ञानिक विचारधारा का प्रचार करेगा और सच्ची सर्वहारा संस्कृति का प्रचार करेगा। यह दुनिया की क्रान्तियों के इतिहास और शिक्षाओं से, अपने देश के वर्ग संघर्षों और मज़दूर आन्दोलन के इतिहास और सबक़ से मज़दूर वर्ग को परिचित करायेगा तथा तमाम पूँजीवादी अफ़वाहों-कुप्रचारों का भण्डाफोड़ करेगा।

2. 'मज़दूर बिगुल' देश और दुनिया की राजनीतिक घटनाओं और आर्थिक स्थितियों के सही विश्लेषण से मज़दूर वर्ग को शिक्षित करने का काम करेगा।

3. 'मज़दूर बिगुल' भारतीय क्रान्ति के स्वरूप, रास्ते और समस्याओं के बारे में क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों के बीच जारी बहसों को नियमित रूप से छापेगा और स्वयं ऐसी बहसें लगातार चलायेगा ताकि मज़दूरों की राजनीतिक शिक्षा हो तथा वे सही लाइन की सोच-समझ से लैस होकर क्रान्तिकारी पार्टी के बनने की प्रक्रिया में शामिल हो सकें और व्यवहार में सही लाइन के सत्यापन का आधार तैयार हो।

4. 'मज़दूर बिगुल' मज़दूर वर्ग के बीच लगातार राजनीतिक प्रचार और शिक्षा की कार्रवाई चलाते हुए सर्वहारा क्रान्ति के ऐतिहासिक मिशन से उसे परिचित करायेगा, उसे आर्थिक संघर्षों के साथ ही राजनीतिक अधिकारों के लिए भी लड़ना सिखायेगा, दुअन्नी- चवन्नीवादी भूजाछोर "कम्युनिस्टों" और पूँजीवादी पार्टियों के दुमछल्ले या व्यक्तिवादी-अराजकतावादी ट्रेडयूनियनबाज़ों से आगाह करते हुए उसे हर तरह के अर्थवाद और सुधारवाद से लड़ना सिखायेगा तथा उसे सच्ची क्रान्तिकारी चेतना से लैस करेगा। यह सर्वहारा की क़तारों से क्रान्तिकारी भरती के काम में सहयोगी बनेगा।

5. 'मज़दूर बिगुल' मज़दूर वर्ग के क्रान्तिकारी शिक्षक, प्रचारक और आह्वानकर्ता के अतिरिक्त क्रान्तिकारी संगठनकर्ता और आन्दोलनकर्ता की भी भूमिका निभायेगा।

प्रिय पाठको,

बहुत से सदस्यों को 'मज़दूर बिगुल' नियमित भेजा जा रहा है, लेकिन काफ़ी समय से हमें उनकी ओर से न कोई जवाब नहीं मिला और न ही बकाया राशि। आपको बताने की ज़रूरत नहीं कि मज़दूरों का यह अख़बार लगातार आर्थिक समस्या के बीच ही निकालना होता है और इसे जारी रखने के लिए हमें आपके सहयोग की ज़रूरत है। अगर आपको 'मज़दूर बिगुल' का प्रकाशन ज़रूरी लगता है और आप इसके अंक पाते रहना चाहते हैं तो हमारा अनुरोध है कि आप कृपया जल्द से जल्द अपनी सदस्यता राशि भेज दें। आप हमें मनीआर्डर भेज सकते हैं या सीधे बैंक खाते में जमा करा सकते हैं।

मनीऑर्डर के लिए पता :
मज़दूर बिगुल, द्वारा जनचेतना
डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020
बैंक खाते का विवरण: **Mazdoor Bigul**
खाता संख्या: **0762002109003787, IFSC: PUNB0076200**
पंजाब नेशनल बैंक, निशातगंज शाखा, लखनऊ
सदस्यता: (वार्षिक) 70 रुपये (डाकख़र्च सहित);
(आजीवन) 2000 रुपये

मज़दूर बिगुल के बारे में किसी भी सूचना के लिए आप हमसे इन माध्यमों से सम्पर्क कर सकते हैं:
फोन: 0522-2786782, 8853093555, 9936650658,
ईमेल: **bigulakhbar@gmail.com**
फेसबुक: **www.facebook.com/MazdoorBigul**

मज़दूर बिगुल

सम्पादकीय कार्यालय	: 69 ए-1, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006 फ़ोन : 8853093555
दिल्ली सम्पर्क	: बी-100, मुकुन्द विहार, करावलनगर, दिल्ली-94, फ़ोन: 011-64623928
ईमेल	: bigul@rediffmail.com
मूल्य	: एक प्रति – रु. 5/- वार्षिक – रु. 70/- (डाक ख़र्च सहित) आजीवन सदस्यता - 2000/-

मोज़रबेअर में मज़दूरों के संघर्ष को मिली हार और उसके नतीजे

मज़दूरों के टूल डाऊन के जबाव में कम्पनी ने एक महीने तक रखा काम बन्द रखा

हाल ही में ग्रेटर नोएडा स्थित मोज़रबेअर कम्पनी के मज़दूरों ने जब अपने हकों को लेकर आवाज़ उठायी तो मैनेजमेण्ट ने उन्हें सबक सिखाने की मंशा से 28 फरवरी से लेकर 2 अप्रैल तक कम्पनी में काम बन्द कर दिया। असल में मज़दूर वर्ष 2011 में मैनेजमेण्ट के साथ बोनस और वेतन में बढ़ोत्तरी सम्बन्धी हुए एक समझौते की तर्ज़ पर एक नये समझौते की माँग कर रहे थे। और यह नया समझौता अप्रैल 2014 से लागू हो जाना चाहिए था। मज़दूर कम्पनी से माँग कर रहे थे कि कम्पनी उन्हें नये समझौते के बारे में साफ़-साफ़ बताये। लेकिन मैनेजमेण्ट कई महीनों से उन्हें लगातार टरकाये जा रहा था। अन्त में जब उन्होंने 28 फरवरी को टूल डाऊन किया तो मैनेजमेण्ट ने सोची-समझी साज़िश के तहत कम्पनी में काम बन्द कर दिया।

आप को बता दें कि 2011 में कम्पनी ने मज़दूरों को मिलने वाले सालाना बोनस में एकाएक भारी कटौती (8300 रु. से 3500 रु.) कर दी, जिसे लेकर मज़दूर हड़ताल पर चले गये। पाँच दिन की हड़ताल के बाद मैनेजमेण्ट और मज़दूरों के बीच 3 वर्ष का समझौता हुआ जिसके तहत बोनस 7500 रु. और वेतन में बढ़ोत्तरी 1500 रु. प्रतिवर्ष निर्धारित की गयी। अप्रैल 2014 से नया समझौता लागू होना था, इसीलिए मज़दूर लम्बे समय से मैनेजमेण्ट से नये समझौते के सम्बन्ध में जानने की कोशिश कर रहे थे। दूसरा वे कम्पनी द्वारा बार-बार काम बन्द किए जाने से भी परेशान थे। लेकिन मैनेजमेण्ट मज़दूरों से बातचीत करने के प्रति पूरी तरह उदासीन था। मैनेजमेण्ट से कोई जवाब न मिलने की वजह से वर्ष 2014 के नवम्बर महीने में उन्होंने कम्पनी की मालकिन से भी मुलाक़ात की। लेकिन उसने कम्पनी की तंग हालत (कम्पनी की हालत इतनी तंग थी कि वर्ष 2014 के दौरान कम्पनी की आमदनी क़रीब एक हज़ार करोड़ रूपये रही!) का बहाना बनाते हुए मज़दूरों को 3 महीने तक इंतज़ार करने की नसीहत दे डाली। 3 महीने तक इंतज़ार करने पर भी जब मज़दूरों की कोई सुनवाई न हुई तो आखिरकार 28 फरवरी को मज़दूरों ने टूल डाउन कर दिया। मज़दूरों के टूल डाउन करते ही मैनेजमेण्ट ने कम्पनी में पॉवर बन्द करवा दी। मज़दूर कम्पनी में न आयें, इसके लिए उनकी कैंटीन, पानी और ट्रांसपोर्ट की सुविधाएँ भी बन्द करवा दी गयीं। इसके बावजूद जब मज़दूरों ने आना बन्द नहीं किया तो पंचिंग मशीनें भी बन्द करवा दी गयीं ताकि मज़दूर अपनी हाज़िरी न लगा सकें। मज़दूरों ने इसके जवाब में अपना हाज़िरी रजिस्टर लगा लिया। मैनेजमेण्ट की हर कोशिश के बावजूद मज़दूर 24 मार्च तक कम्पनी आते रहे। लेकिन 24 मार्च को कम्पनी ने पुलिस का सहारा लेकर मज़दूरों को ज़ोर-ज़बरदस्ती से बाहर निकलवा दिया। इसके बाद मज़दूरों ने कम्पनी के सामने टेंट लगा लिया। अंत में 2 मार्च को मैनेजमेण्ट और मज़दूरों में नया समझौता हुआ जिसके तहत बड़ी चालाकी से मैनेजमेण्ट ने एक तरफ़ तो वेतन में वृद्धि को 1500 से बढ़ाकर 2100 रुपये प्रतिवर्ष किया, दूसरी तरफ़ बोनस को 7500 से घटाकर 5000 रुपये कर दिया। कुल-मिलाकर समझौते में नुकसान मज़दूरों का ही हुआ। कम्पनी ने मज़दूरों का 21 दिन का वेतन भी काट लिया। ऊपर से कम्पनी ने नेतृत्वकारी स्थानीय मज़दूरों के ऊपर गैरक़ानूनी तरीक़े से काम ठप करने का केस भी डलवा दिया।

ग़ौरतलब है कि मोज़रबेअर कम्पनी में मज़दूरों की कोई यूनियन नहीं है। राजनीतिक चेतना और संघबद्धता का अभाव ही मज़दूरों की इस हार का बुनियादी कारण नज़र आता है। मज़दूर कम्पनी को इतना बेवकूफ़ मानकर चल रहे थे कि उन्हें लग रहा था 2011 की हड़ताल से कम्पनी ने कोई सबक नहीं सीखा होगा। उन्हें लग रहा था कि 2011 की तरह कम्पनी इस बार भी आसानी से झुक जायेगी। लेकिन मैनेजमेण्ट मज़दूरों से कई गुना चालाक निकला। उसे पता था कि जैसे ही 2011 के समझौते का अंत होगा मज़दूर फिर से समझौते के लिए दबाव बना सकते हैं। इसीलिए उसने काफ़ी समय पहले से ही मज़दूरों को सबक सिखाने के लिए कमर कस ली थी। कम्पनी की मालकिन ने जानबूझकर मज़दूरों को 3 महीने तक इंतज़ार करने की सलाह दी। मज़दूर इस आशा में 3 महीने तक इंतज़ार करते रहे कि इसके बाद उनकी भी सुनी जायेगी। इससे मैनेजमेण्ट को मज़दूरों से पुराने आर्डर पूरे करवाने का समय मिल गया। कम्पनी ने जानबूझकर जनवरी-फरवरी महीने के ऑर्डर नहीं लिये ताकि अगर काम बन्द भी करना पड़े तो कोई नुकसान न हो। लेकिन मोज़रबेअर के मज़दूरों ने योजनाबद्ध तरीक़े से मैनेजमेण्ट की रणनीति को जानने के बारे में सोचा तक नहीं। उन्होंने यह तक नहीं सोचा कि कम्पनी पर दबाव बनाने का सबसे अच्छा समय वह होता है जब कम्पनी के पास सबसे ज़्यादा काम हो। काफ़ी समय पहले से ही पुलिस का कम्पनी में आना-जाना शुरू हो गया था लेकिन इससे भी मज़दूर आँखें मूँदकर बैठे रहे। और तो और मज़दूर श्रम अधिकारियों की गरमागरम बातों से भी उम्मीद लगाये बैठे रहे। इस पूरे समय के दौरान मज़दूर अपना रास्ता बनाने की बजाय कम्पनी द्वारा उनके लिए पहले से ही तय किये गये रास्ते पर चलते रहे। जिसका नतीजा हार ही होना था।

अन्त में हम यही कहना चाहेंगे कि यह कोई पहली बार नहीं है कि मज़दूरों के किसी संघर्ष को हार का सामना करना पड़ा है। लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि हार से कोई सबक लिया जाता है या नहीं ताकि भविष्य में फिर से ऐसी गलतियाँ न दोहरायी जा सकें। मोज़रबेअर के मज़दूरों के साथ-साथ यह सभी मज़दूरों के लिए सबक लेने का समय है कि किसी भी मज़दूर आन्दोलन को आगे बढ़ाने के लिए, उसे गति देने के लिए मज़दूरों का राजनीतिक चेतना से लैस होना और एक ऐसी यूनियन के रूप में संघबद्ध होना बेहद ज़रूरी है जो ट्रेड यूनियन जनवाद को लागू करती हो। कुछ लोगों को संघर्ष का ठेका देने की बजाय (जैसा कि मोज़रबेअर में हुआ) ऐसी यूनियन जो हर मज़दूर की भागीदारी को सुनिश्चित करे, सवाल उठाने की आज़ादी दे और सामूहिक रूप से फैसला लेने का आधार मुहैया कराये।

– अखिल

ई.एस.आई. ख़त्म करने की मोदी सरकार की मज़दूर-विरोधी साज़िशें

7 अप्रैल को मोदी सरकार द्वारा श्रम सुधारों के नाम पर मज़दूरों पर एक और बड़े हमले का ऐलान हुआ है। सरकार ई.एस.आई. क़ानून में एक बड़ा संशोधन करने की तैयारी में है। इस संशोधन के बाद पूँजीपतियों के लिए मज़दूरों को ई.एस.आई. सुविधा देना अनिवार्य नहीं रह जायेगा बल्कि वैकल्पिक हो जायेगा और इसकी जगह वे मज़दूरों का निजी बीमा कम्पनियों से बीमा करवा सकेंगे।

निजी बीमा कम्पनियों द्वारा लोगों की लूट जगजाहिर है। साधारण जनता को बीमे का फायदा लेने के लिए दर-दर की ठोकरें खानी पड़ती हैं। बहुत कम लोग बीमे का फायदा वास्तव में ले पाते हैं। बेशक ई.एस.आई. स्कीम में ग़म्भीर कमियाँ हैं, लेकिन इनके बावजूद ई.एस.आई. स्कीम निजी बीमे से बहुत बेहतर है। जो सुविधाएँ ई.एस.आई. के जरिए मज़दूरों को मिल पातीं हैं वे सुविधाएँ निजी कम्पनी से कभी नहीं मिल पायेंगी।

पूँजीपतियों और सरकारी तंत्र की मिलीभगत के चलते पहले ही बहुत थोड़े से मज़दूरों के ई.एस.आई. कार्ड बने हैं। विभाग के अधिकारी पूँजीपतियों से पैसा खाते हैं और मज़दूरों को ई.एस.आई. सुविधा न देने वाले पूँजीपतियों पर कार्रवाई नहीं करते। ऐसा भी काफ़ी बड़े स्तर पर होता है कि पूँजीपति मज़दूरों के वेतन से ई.एस.आई. का पैसा काट लेते हैं लेकिन ई.एस.आई. विभाग को जमा नहीं करवाते। लेकिन पूँजीपति वर्ग मज़दूरों को ई.एस.आई. सुविधा देने या मज़दूरों के दवा-इलाज पर पैसा खर्च करने के झंझट से ही मुक्ति पाना चाहता है। इसी कोशिश में ई.एस.आई. को वैकल्पिक बनाया जा रहा है। पूँजीपति जो पैसा ई.एस.आई. विभाग को जमा करवाते थे अब निजी बीमा कम्पनी को देंगे। कोई भी समझ सकता है पूँजीपतियों को ऐसा विकल्प मिल जाने से पूँजीपतियों के लिए और भी बड़े स्तर पर मज़दूरों को ई.एस.आई. सुविधा न देना आसान हो जायेगा। ई.एस.आई. विभाग के एक बड़े अधिकारी ने बताया कि सरकार इस तरह की व्यवस्था करने जा रही है कि विभिन्न विभागों – श्रम विभाग, ई.पी.एफ. विभाग, ई.एस.आई. विभाग, आय कर विभाग आदि से अलग-अलग इंस्पेक्टर कम्पनियों में जाँच-पड़ताल के लिए न जायें बल्कि एक ही इंसपेक्टर हो। सरकार ई.एस.आई. अस्पतालों और डिस्पेंसरियों को बन्द करने या इन्हें सिविल अस्पतालों-डिस्पेंसरियों में बदलने, सरकारी अस्पतालों को ई.एस.आई. से जोड़ने आदि की तैयारी कर रही है। ई.एस.आई. विभाग द्वारा चलाये जा रहे क़रीब 400 मेडिकल कालेजों, नर्सिंग व डेंटल संस्थानों को बन्द करने का ऐलान तो सरकार कर ही चुकी है। इन सबसे से स्पष्ट है कि सरकार का इरादा वास्तव में ई.एस.आई. विभाग ही बन्द करने का है। उपरोक्त ई.एस.आई. अधिकारी ने भी इस बात की पुष्टि की है। गौरतलब है कि ई.एस.आई. विभाग के कर्मचारियों ने सरकार की इस नीति के खिलाफ़ एक सप्ताह काला बिल्ला लगाकर रोष जाहिर किया है।

अन्य मज़दूर विरोधी श्रम सुधारों के अलावा फैक्ट्री एक्ट, 1948 के अन्तर्गत आने वाले कारखानों की एक बड़ी संख्या को इस क़ानून से बाहर करने की तैयारी हो रही है। अभी फैक्ट्री एक्ट उन कारखानों पर लागू होता है जहाँ 10 या अधिक (जहाँ बिजली का इस्तेमाल होता हो) और 20 या अधिक (जहाँ बिजली का इस्तेमाल न होता हो) मज़दूर काम करते हैं। सरकार क़ानून में संशोधन करके पहले मामले में मज़दूरों की संख्या 20 या अधिक और दूसरे मामले में मज़दूरों की संख्या 40 या अधिक तय करने की कोशिश में है। अगर यह संशोधन हो जाता है हो इस क़ानून के दायरे से बाहर रह जाने वाले कारखानों के मज़दूर तो क़ानूनन ई.एस.आई., ई.पी.एफ. जैसी सुविधाओं से बाहर हो जायेंगे। बाकी बची कसर ई.एस.आई. को वैकल्पिक बना देने से निकाल दी जायेगी।

पूँजीपति वर्ग द्वारा मज़दूर वर्ग पर हमलों का जवाब देने के लिए फिलहाल मज़दूर वर्ग की तैयारी नहीं है। केन्द्रीय ट्रेड यूनियनों ने पूँजीपतियों का पक्ष चुन लिया है और मज़दूरों से दगा कर चुकी हैं। सरकार के विरोध के लिए ये कुछ दिखावे भरी कार्रवाइयाँ जरूर करती हैं लेकिन श्रम क़ानूनों में मज़दूर विरोधी संशोधनों के साथ इनकी पूरी सहमति है। देश के विभिन्न हिस्सों में मज़दूरों के जुझारू संगठन भी बन रहे हैं जो एक शुभ संकेत है। लेकिन अभी मज़दूरों की सांगठनिक ताक़त बहुत कमज़ोर है। इस कमज़ोरी को दूर करने के लिए सरकार के हमलों की गम्भीरता को समझने वाले वर्ग सचेत मज़दूरों को मज़दूरों की वर्गीय एकता और संघर्ष को मज़बूत करने के लिए ज़ोरदार कोशिशें करनी होंगी।

केजरीवाल सरकार न्यूनतम वेतनमान लागू कराने की ज़िम्मेदारी से मुकरी

1 अप्रैल को काग़ज़ पर न्यूनतम वेतन बढ़ाने वाली आम आदमी पार्टी सरकार के वज़ीरपुर के विधायक राजेश गुप्ता के पास मज़दूर हर फैक्टरी में न्यूनतम वेतनमान लागू करवाने की माँग लेकर पहुँचे पर राजेश गुप्ता डरकर अपने ही दफ्तर नहीं आये।

एक महीने में दूसरी बार ऐसा हुआ कि दिल्ली इस्पात उद्योग मज़दूर यूनियन राजेश गुप्ता के दफ्तर पहुँची और वे वहाँ से नदारद हो गये। उनके दफ्तर के बाहर बोर्ड पर लिखा है – राजेश गुप्ता का कार्यालय, बैठने का समय हर बुधवार को 9 से 11 बजे। 9 बजे से 11 बजे तक मज़दूर वहाँ अपनी सभा चलाते रहे। 11 बजे के बाद आम आदमी पार्टी और दिल्ली सरकार का एक प्रतिनिधि वहाँ आया और यूनियन प्रतिनिधियों को बोलने लगा कि यह सरकार की ज़िम्मेदारी नहीं है कि वह फैक्टरियों में न्यूनतम वेतन लागू करवाये। उसने बेशर्मी से कहा कि अगर मज़दूरों को न्यूनतम वेतन नहीं मिलता है तो वे फैक्टरी में काम करते ही क्यों हैं और अगर 2 दिन मज़दूर काम नहीं करेंगे तो भूखे थोड़े ही मर जायेंगे, उन्हें जहाँ न्यूनतम वेतन पर काम मिले वहाँ काम करें वरना भूखे बैठें! जिस पर मज़दूरों का आक्रोश बढ़ गया और दिल्ली सरकार के प्रतिनिधि को उल्टे पाँव वहाँ से भागना पड़ा।

काग़ज़ों पर न्यूनतम वेतन बढ़ाने वाली केजरीवाल सरकार की नीयत इस बातचीत से साफ हो जाती है। न्यूनतम वेतन देने के लिए फैक्ट्री मालिकों पर दबाव बनाने की जगह आम आदमी पार्टी की सरकार कहती है कि मज़दूर ऐसी जगह काम तलाशें जहाँ न्यूनतम वेतन मिलता हो। परन्तु दिल्ली में 70 लाख आबादी ठेके पर काम करती है, उसे न तो न्यूनतम वेतन मिलता है और न ही अन्य श्रम क़ानूनों के तहत मिलने वाली सुविधाएँ, वे कौन सी फैक्ट्री में काम तलाशें? ख़ुद राजेश गुप्ता का दफ्तर वज़ीरपुर इंडस्ट्रयल एरिया के ए ब्लॉक की जिस फैक्टरी ए -73 में है, (जिसमें वे पार्टनर भी हैं और मज़दूरों ने बताया कि फैक्टरी उनके साले की है) वहाँ भी मज़दूरों को न्यूनतम वेतन नहीं मिलता है। जब विधायक महोदय की ख़ुद की फैक्टरी में न्यूनतम वेतनमान नहीं लागू होता है तो वे वज़ीरपुर के अपने मालिक भाइयों की फैक्टरियों में न्यूनतम वेतन लागू करवायेंगे? साफ है कि मज़दूरों के लिए आम आदमी पार्टी व कांग्रेस-भाजपा में कोई अन्तर नहीं है।

‘वज़ीरपुर मज़दूर’ अख़बार: लफ़्फ़ाज़ी का नया नमूना

वज़ीरपुर में पिछले साल हुई हड़ताल ने मालिकों की कमर तोड़ कर रख दी। मुख्यत: 8 घंटे काम के लिए छिड़ा यह संघर्ष वज़ीरपुर की ऐतिहासिक लड़ाई बन गया। फैक्टरी मालिक और श्रम विभाग को अपनी माँगों पर झुकाने के बावजूद हड़ताल भले ही आंशिक तौर पर ही सफल हुई हो पर इसने मज़दूरों को बेहद ज़रूरी सीखें दीं। हड़ताल के अन्दर से ही तपकर मज़दूरों की अपनी यूनियन दिल्ली इस्पात उद्योग मज़दूर यूनियन निकली। इस हड़ताल के दौरान मज़दूरों ने तमाम किस्म के आंदोलनकर्ताओं को देखा। रघुराज से लेकर इंकलाबी मज़दूर केन्द्र सरीखे गद्दारों को खदेड़कर भगा दिया गया। मज़दूरों ने सीखा कि संघर्ष के रूपों में क्रान्तिकारी तरीक़ा और सही दिशा लागू की जाये तो संघर्ष को जीता जा सकता है और अगर दिशा ठीक न हो और उसका पालन ठीक से न हो तो आन्दोलन बिखरते देर नहीं लगती है।

सिर्फ वज़ीरपुर ही नहीं मज़दूर आन्दोलन के पूरे इतिहास में तमाम किस्म की विचारधाराओं वाले समूह-संगठन सक्रिय हैं जिनसे संघर्ष कर ही सही क्रान्तिकारी लाइन मज़दूरों के बीच स्थापित होगी। वज़ीरपुर में पिछले महीने से खुद को “दिमागी मज़दूर” कहने वाले बुद्धिजीवियों का “वज़ीरपुर मज़दूर” नामक अखबार निकल रहा है। मज़दूर आंदोलन के प्रति इनकी प्रतिस्थापनाएँ गलत व बचकानी हैं जिनके खिलाफ़ डटकर संघर्ष करना होगा। हम इनकी मुख्य धारणाओं पर संक्षेप में अपनी बात रखकर इनके खिलाफ़ संघर्ष का बिगुल फूँकते हैं। यह अखबार मुख्यत: सिर्फ़ कारखानों की रिपोर्टों और मज़दूरों के द्वारा एक दूसरे से अनुभव साझा करने तक सीमित है। हर सम्पादकीय में इन्होंने मज़दूरों द्वारा खुद की मुक्ति की बात दुहराई है। यह बात सही है कि मज़दूर अपनी मुक्ति खुद करता है परन्तु इस सवाल का जवाब ये नहीं देते कि यह कैसे होगा। इनके मुँह से ही इनकी बातें सुन लेते हैं। ये कहते हैं कि वे बातें अधिक ज़रूरी हैं जो “...मज़दूर रोज़मर्रा की अपनी लड़ाइयों में बनाते रहते हैं। और इनकी खबर किसी को नहीं होती। कभी कभी तो खुद काम करने वालों को भी नहीं। ‘वज़ीरपुर मज़दूर’ ऐसी ही खबरों से बनते नये आंदोलन का हिस्सा बनने की एक छोटी सी कोशिश है। मज़दूरी-काम-ठेका के इस पूरे घनचक्कर से मुक्ति पाने के लिए कोई मसीहा नहीं आएगा। इस घोर कलयुग का अंत करने कोई कल्कि अवतार नहीं लेगा – कि जिसे वोट देकर एक दिन हम चुन लेंगे! अपना राजा मान लेंगे! कामगारों के एक पुराने सिपाही ने बहुत सही कहा था – ‘मज़दूर अपनी मुक्ति खुद रचेगा।’... इसलिए हमें अपना मसीहा खुद होना होगा। अपने संघर्षों को संगठित करना होगा।” अख़बार के दूसरे अंक में केजरीवाल सरकार का घेराव कर हक़ अधिकार के लिए प्रचार करने के सम्बन्ध में ये कहते हैं “...हम लोग माइक लगाकर क्यों घूमें? और हम लोग सचिवालय का घेराव क्यों करें? तुम करो हम साथ में आयेंगे। हम लोग अपनी जगह के मज़दूरों को लायेंगे। तुम यहाँ के मज़दूरों को इकट्ठा करो। तुम ही तो कह रहे थे सरकार और यूनियन तुम्हारी प्रतिनिधि है। पर करती कुछ नहीं। हमारा तो कहना है कि नेताओं के भरोसे रहोगे तो कुछ नहीं पाओगे। ऐसा ही चलता रहेगा। खुद कीजिएगा तो हम सब साथ हो जायेंगे।”

‘मज़दूर अपनी मुक्ति खुद रचेगा’ – ये शब्द मज़दूरों के नेता व मज़दूर राज यानी समाजवाद के सिद्धांतकार मार्क्स के हैं। परन्तु मार्क्स इतना ही नहीं कहते। आगे वे कहते हैं कि मज़दूर वर्ग को मुक्त होने के लिए समाजवादी विचारधारा को अपनाना होता है जो मौजूदा ढाँचे में चल रहे वर्ग युद्ध में मज़दूर वर्ग का मार्ग दर्शन करती है। मज़दूर वर्ग का हिरावल दस्ता इस विचारधारा को अपनाता है यानी मज़दूरों की अपनी क्रान्तिकारी पार्टी समाजवादी विचारधारा के आधार पर मज़दूर मुक्ति का रास्ता तैयार करती है। परन्तु वज़ीरपुर मज़दूर अखबार के अनुसार यह चेतना तो स्वयं मज़दूर वर्ग में पैदा हो सकती है। यह स्वत:स्फूर्ततावाद है। ‘वज़ीरपुर मज़दूर’ अखबार मज़दूर आंदोलन स्वत:स्फूर्ततावाद की प्रवृत्ति का वाहक है जिसे इतिहास में मज़दूर नेताओं ने पहले भी नंगा किया है। स्वयं मज़दूर वर्ग द्वारा मज़दूर मुक्ति की बात करने वालों का जवाब देते हुए काउत्स्की (गद्दार होने से पहले) ने लिखा है “आधुनिक समाजवादी चेतना केवल गहन वैज्ञानिक ज्ञान के आधार पर ही उत्पन्न हो सकती है। सच तो यह है कि समाजवादी उत्पादन के लिए आधुनिक आर्थिक विज्ञान उतना ही ज़रूरी है, जितनी कि आधुनिक प्रौद्योगिकी...” तथा “समाजवादी चेतना एक ऐसी चीज़ है जो सर्वहारा के वर्ग संघर्ष में बाहर से लायी जाती है और वह कोई ऐसी चीज़ नहीं है जो इस संघर्ष के अन्दर से स्वत:स्फूर्त रूप से पैदा हो जाती है।” इस बात को पूरा करते तथा स्पष्ट करते हुए लेनिन कहते हैं कि “बेशक, इसका मतलब यह नहीं कि इस प्रकार की विचारधारा पैदा करने में मज़दूर कोई भाग नहीं लेते, पर वह उसमे मज़दूरों की हैसियत से नहीं, बल्कि समाजवादी सिद्धान्तकारों की हैसियत से, प्रूदों, वाइटलिंग जैसे लोगों की हैसियत से भाग लेते हैं। दूसरे शब्दों में, विचारधारा को उत्पन्न करने में मज़दूर केवल उसी समय और उसी हद तक भाग लेते हैं, जिस समय और जिस हद तक वे अपने युग के ज्ञान पर न्यूनाधिक रूप में अधिकार प्राप्त करने तथा उस ज्ञान को और विकसित करने में समर्थ होते हैं। और यदि हम चाहते है कि मज़दूरों में यह काम कर पाने की क्षमता बढ़े, तो हमें आम मज़दूरों की चेतना के स्तर को ऊपर उठाने की हर मुमकिन कोशिश करनी पड़ेगी; मज़दूरों को यह करना पड़ेगा कि वह अपने को “मज़दूरों के साहित्य” की बनावटी सीमाओं में बंद न रखें और आम साहित्य पर अधिकाधिक अधिकार प्राप्त करना सीखें। “अपने को बंद न रखें” की जगह “उन्हें बंद न रखा जाए” कहना ज्यादा सही होगा, क्योंकि मज़दूर खुद वह साहित्य पढ़ते हैं और पढ़ना चाहते हैं, जो बुद्धिजीवियों के लिए लिखा जाता है और यह चंद (बुरे) बुद्धिजीवियों का ही विचार है कि कारख़ानों की हालत के बारे में दो-चार बातों को बता देना और पुरानी जानी हुई बातों को बार-बार दोहराते रहना ही “मज़दूरों के लिए” काफ़ी है।” ‘वज़ीरपुर मज़दूर’ अखबार लिखने वाले कितना ही अपने को दिमाग़ी मज़दूर बता लें, वास्तव में ये “चंद (बुरे) बुद्धिजीवी” हैं जो मज़दूरों को “मज़दूरों के साहित्य” की बनावटी सीमाओं में बन्द रखना चाहते हैं। ये बुरे ही नहीं ख़तरनाक भी हैं क्योंकि ये मज़दूरों की पार्टी की बात किये बग़ैर ही मुक्ति शब्द दुहराते हैं, “सचेतन तत्व” के बरक्स वे स्वत:स्फूर्ततावाद का जश्न मनाते हैं। ये हमेशा मज़दूरों को नेतृत्व देने की जगह उनके पीछे चलने के हिमायती हैं। ये ख़तरनाक इसलिए हैं क्योंकि अपने आप में स्वत:स्फूर्ततावाद बुर्जुआ वर्ग की ही विचारधारा है। लेनिन के शब्दों में, “जो कोई भी मज़दूर आन्दोलन की स्वयं स्फूर्तता की पूजा करता है, जो कोई भी “सचेतन तत्व” की भूमिका को, सामाजिक जनवाद की भूमिका को, कम करके आँकता है, वह चाहे ऐसा करना चाहता हो या न चाहता हो, पर असल में वह मज़दूरों पर बुर्जुआ विचारधारा के असर को मज़बूत करता है।” लेनिन स्पष्ट करते हैं कि “स्वयं स्फूर्त आन्दोलन का, कम से कम विरोध के मार्ग पर विकसित होने वाले आन्दोलन का यह परिणाम क्यों होता है कि बुर्जुआ विचारधारा का प्रभुत्व हो जाता है? इसका कारण केवल यह है कि उत्पत्ति की दृष्टि से बुर्जुआ विचारधारा समाजवादी विचारधारा से बहुत पुरानी है, वह अधिक विकसित है और उसे फैलने की कई अधिक सुविधाएँ मिली हुई हैं।” हालाँकि यह बात ठीक है कि “... मज़दूर वर्ग स्वयंस्फूर्त ढंग समाजवाद की ओर खिंचता है, परन्तु फिर भी अधिक व्यापक रूप से फैली हुई बुर्जुआ विचारधारा (जो नाना रूपों में पुनर्जीवित की जाती रहती है) स्वयं स्फूर्त ढंग से अपने को मज़दूर वर्ग के ऊपर और भी ज़्यादा मात्रा में लादती रहती है।”(लेनिन) ‘वज़ीरपुर मज़दूर’ अखबार में मज़दूरों के ‘रोज़मर्रे के संघर्षों’ के आधार पर खड़े होने वाले नये संघर्षों को सबसे ज़रूरी बताया गया है। स्वत:स्फूर्ततावाद का मूल यही है कि मज़दूर के रोज़मर्रे के संघर्षों को चलाना न कि समाजवाद या सरकार का राजनीतिक भंडाफोड़ करना। मज़दूर आंदोलन का अर्थवादी भटकाव ही स्वत:स्फूर्तवाद के मूल में है। यानि मज़दूरों के वेतन भत्ते की लड़ाई लड़ते रहना। परन्तु जिसे ये मूर्ख नया बता रहे हैं वह मज़दूर आंदोलन के पैदा होने के समय से ही मौजूद है। पूँजीपति वर्ग की सरकार को भी मज़दूरों को आर्थिक रियायतें देने में कोई दिक्कत नहीं होती है। क्योंकि “आर्थिक रियायतें (या झूठी रियायतें), ज़ाहिर है, सरकार के दृष्टिकोण से सबसे सस्ती और सबसे अधिक लाभदायक होती हैं, क्योंकि उनके ज़रिये उसे आम मज़दूरों का विश्वास प्राप्त करने की आशा होती है।” (लेनिन) यानी ‘वज़ीरपुर मज़दूर’ अखबार मज़दूर अख़बार मज़दूरों को खुद मुक्त करने के नाम पर अन्त में सिर्फ़ इस व्यवस्था के घनचक्कर में ही फँसाये रखना चाहता है। दरअसल खुद को दिमाग़ी मज़दूर बताने वाले ये बुरे बुद्धिजीवी लफ्फ़ाज़ हैं और हमें लेनिन की यह बात गाँठ बाँध लेनी चाहिए कि लफ़्फ़ाज़ मज़दूर वर्ग के सबसे बुरे दुश्मन होते हैं क्योंकि ये मज़दूरों के अपने होने का दावा कर उनमें भीड़ वृत्ति को जागृत करते हैं और आन्दोलन को अंदर से खोखला करते हैं। अभी तक निकले ‘वज़ीरपुर मज़दूर’ के दो अंकों में इन्होंने जमकर लफ़्फ़ाज़ी की है। मज़दूरों को इन लफ़्फ़ाज़ों को आंदोलन से दूर कर देना चाहिए। आगे भी हम लगातार इनके द्वारा फैलाए भ्रम पर चोट करते रहेंगे परन्तु मूलत: उपरोक्त विश्लेषण को दिमाग़ में रखते हुए मज़दूरों को इनका भंड़ाफोड़ करना होगा।

– सनी

(इसी अंक में पृष्ठ 14 पर देखें ‘लफ़्फ़ाज़ मज़दूर वर्ग के सबसे बुरे दुश्मन होते हैं’–सम्पादक)

दिल्ली सचिवालय पर हुए बर्बर लाठी-चार्ज के ख़िलाफ़ वज़ीरपुर के ‘आप’ विधायक राजेश गुप्ता के दफ्तर का घेराव

25 मार्च को हजारों औद्योगिक मज़दूर, ठेका कर्मचारी, झुग्गी निवासी और आम मेहनतक़श लोग केजरीवाल सरकार को नियमित कार्य पर ठेका प्रथा समाप्त करने व अन्य वायदों को याद दलाने के लिए शान्तिपूर्ण व संवैधानिक तरीक़े से दिल्ली सचिवालय पहुँचे। लेकन केजरीवाल सरकार ने उनका ज्ञापन लेने से भी इंकार कर दिया और दिल्ली पुलिस को प्रदर्शनकारियों पर लाठी चार्ज का निर्देश दे दिया। इसके बाद दिल्ली पुलिस ने जानवरों सा बर्ताव करते हुए सैंकड़ों महिला मज़दूरों पर बुरी तरह लाठी चार्ज किया, उनके कपडे फाड़े, उनके नाज़ुक अंगों पर वार किया, उन्हें बाल पकडकर सड़क पर घसीटा।

इस बर्बर लाठीचार्ज के विरोध में 1 अप्रैल को दिल्ली के वज़ीरपुर औद्योगिक इलाक़े के मज़दूरों ने एकजुट होकर वज़ीरपुर के विधायक राजेश गुप्ता के दफ्तर का घेराव किया। मज़दूरों ने माँग की कि केजरीवाल सरकार 15 दिनों के भीतर इस लाठीचार्ज के लिए दिल्ली की जनता से लिखित माफ़ी माँगे, दोषी पुलिसकर्मियों पर तत्काल कार्रवाई की जाये। मज़दूरों ने पहले वज़ीरपुर इलाक़े से जुटान कर रैली निकाली और रैली की शक्ल में राजेश गुप्ता के दफ्तर की ओर बढे। मगर वहाँ पहुँच कर उन्हें पता चला कि राजेश गुप्ता दफ्तर छोडकर वहाँ से नदारद हैं। दिल्ली के मुख्यमंत्री की तरह वज़ीरपुर के विधायक ने भी मज़दूरों से मिलना ज़रूरी नहीं समझा मगर इसके बावजूद मज़दूरों ने अपनी ‘मज़दूर पंचायत’ राजेश गुप्ता के दफ़्तर के बाहर लगाकर यह ऐलान किया कि मज़दूरों, महिलाओं, बच्चों, छात्रों पर बर्बरता से लाठीचार्ज कराने वाली और अपने वादों से मुकरने वाली आम आदमी पार्टी की सरकार का दिल्ली के मेहनतकश लोग पूर्ण बहिष्कार करते हैं। और यह बहिष्कार तब तक चलता रहेगा जब तक केजरीवाल सरकार इस लाठीचार्ज के लिए दिल्ली की जनता से लिखित माफ़ी नहीं माँगती, दोषी पुलिसकर्मियों पर तत्काल कार्रवाई नहीं करती। अपनी मज़दूर पंचायत की समाप्ति मज़दूरों ने केजरीवाल सरकार का पुतला दहनकर इस प्रण के साथ की कि पूरी दिल्ली में इस सरकार के असली जनवरोधी चेहरे को उजागर करने के लए भंडाफोड अभियान जारी रहेगा।

शहीद मेला में अव्यवस्था फैलाने, लूटपाट और मारपीट करने की धार्मिक कट्टरपंथी फासिस्टों और उनके गुण्डा गिरोहों की हरकतें

उत्तर-पश्चिम दिल्ली के शाहाबाद डेयरी में 21 से 23 मार्च तक शहीद मेला का आयोजन 'नौजवान भारत सभा' के वालंटियर्स की जुझारू मुस्तैदी और इलाके की आम मजदूर आबादी के सहयोग से सफलतापूर्वक सम्पन्न हो गया, लेकिन पूरे आयोजन में गडद्यबड़ी फैलाने के लिए धार्मिक कट्टरपंथी तत्वों और उनकी शह पाये हुए बस्ती के लम्पट गिरोहों ने अपनी पूरी ताकत झोंक दी थी। स्थानीय पुलिस प्रशासन की भी उनसे पूरी मिलीभगत थी।

मेले के प्रचार के दौरान और प्रभातफेरियों में नौभास की टोलियाँ लगातार धार्मिक कट्टरपंथ के खिलाफ नारे लगाती थीं और प्रचार करती थीं। इससे विहिप और संघ के लोगों में काफी बौखलाहट थी। कुछ लोगों ने समर्थक मजदूर आबादी को यह कहकर भा भड़कान का कोशिश की कि इन लोगों के साथ मुसलमानों के लड़के भी सक्रिय हैं, इसलिए अपने घरों के नौजवानों को इनके साथ मत भेजो, लेकिन इस प्रचार का कोई असर नहीं पड़ा। मेले के पहले दिन से ही असामाजिक तत्व गिरोह बनाकर तोड़फोड़ करने, अराजकता फैलाने, मेला स्थल के कैम्पों से सामान लेकर भागने की कोशिशें करते रहे। कई ऐसे तत्वों को कार्यकर्ताओं ने पकड़कर बाहर भगाया। गुण्डे बार-बार बाहर "देख लेने" और स्त्री कार्यकर्ताओं पर तेजाब फेंक देने की धमकी देकर गये। तीसरे दिन गुण्डों ने मेला स्थल के बाहर नौभास के कार्यकर्ता श्रवण को अकेले पाकर लाठी-डण्डों से हमला किया। काफी चोट खाने के बावजूद श्रवण ने उनमें से कई की अच्छी धुनाई की। संचालक को मंच से यह घोषणा करनी पड़ी कि हम भी गुण्डागर्दी करने वालों को तबाह करने देने की हिम्मत और औकात रखते हैं, यदि क्रांतिकारी राजनीति की बात करते हैं और भगतसिंह का नाम लेते हैं तो हर अंजाम के लिए तैयार होकर ही मैदान में उतरे हैं। इसके बाद बस्ती के मजदूरों, स्त्रियों और नौजवानों ने मुस्तैदी से ऐसे तत्वों पर निगाह रखनी शुरू कर दी।

पहले दिन से ही आयोजकों ने कई बार स्थानीय पुलिस को जाकर और फिर फोन से सम्पर्क करके कानून व्यवस्था बनाये रखने के लिए मेला स्थल के बाहर तैनाती के लिए कहा, लेकिन वह नहीं आयी। लेकिन अव्यवस्था फैलाने वाले एक तत्व को जब आयोजकों ने धक्के मारकर बाहर किया, तो उसके फोन करने पर तुरंत पुलिस आ गयी। पुलिस ने जब वालंटियर्स पर धौंस जमाने की कोशिश की, तो उसे दो टूक शब्दों में बता दिया गया कि हमलोग सारी मिलीभगत समझते हैं और यहाँ अब हम यह सब नहीं चलने देंगे।

मेला के दूसरे दिन सुबह उसी जगह पर आर.एस.एस के लोगों ने आकर शाखा लगायी। फिर तीसरे दिन प्रभातफेरी के बाद पैंतीस-चालीस लोगों ने आकर बड़ी शाखा लगायी, और कुछ देर मीटिंग करते रहे। (मेला रोज चार बजे से शुरू होता था)। इन लोगों में से कई लोग स्थानीय नहीं थे।

यह सब कुछ अप्रत्याशित नहीं है। दिल्ली चुनाव के पहले बवाना और होलम्बी में साम्प्रदायिक तनाव भड़काने की घटनाओं से सभी वाकिफ हैं। मजदूर बस्तियों में जो लम्पट नशेड़ी-गँजेड़ी अपराधी गिरोह मौजूद हैं, वे मौका पड़ने पर किन लोगों द्वारा इस्तेमाल किये जाते हैं, यह सभी जानते हैं। इन्हीं बस्तियों में ठेकेदारों, दलालों, सूदखोरों, दुकानदारों की एक ऐसी आबादी भी रहती है, जो गरीब मेहनतकशों को संगठित करने की हर कार्रवाई से नफरत करती है। इसके पहले भी 'शहीद भगतसिंह पुस्तकालय' पर ढेले-पत्थर फेंकने, पुस्तकालय का बोर्ड उतारने और पोस्टर फाड़ने की घटनाएँ घट चुकी हैं।

इतना तय है कि ऐसे तमाम प्रतिक्रियावादियों से सड़कों पर मोर्चा लेकर ही काम किया जा सकता है। इनसे भिडंत तो होगी ही। जिसमें यह साहस होगा वही भगतसिंह की राजनीतिक परम्परा की बात करने का हक़दार है, वर्ना गोष्ठियों- सेमिनारों में बौद्धिक बतरस तो बहुतेरे कर लेते हैं। इन घटनाओं ने फिर से यह साबित किया है कि साम्प्रदायिक फासिस्टों और उनकी गुण्डा वाहिनियों के खिलाफ जुझारू एकजुटता बनानी होगी और इनका आमने-सामने मुकाबला करना होगा।

– कविता

नोएडा की मज़दूर बस्ती में शहीद मेले का आयोजन

नोएडा के सेक्टर 63 स्थित छिजारसी में 21 से 23 मार्च तक शहीद मेला आयोजित किया गया। मेले के तीसरे व अंतिम दिन क्रांतिकारी गीतों एवं कविता पाठ तथा फ़िल्मों के अलावा पंजाब की तर्कशील सोसाइटी के साथियों ने अंधिावश्वास-तोड़क जादू के खेल दिखाये और पाखंडी बाबाओं, साधू-संतों के चंगुल से निकलने की अपील की तथा वैज्ञानिक व तर्कशील सोच को बढावा देने की जरूरत पर बल दिया। भगतसिंह, सुखदेव एवं राजगुरू के 84 वें शहादत दिवस के अवसर पर शहीद मेले से एक मशाल जुलूस भी निकाला गया जिसमें 'भगतसिंह तुम जिन्दा हो हम सबके संकल्पों में', 'अमर शहीदों का पैगाम, जारी रखना है संग्राम' जैसे गगनभेदी नारे लगाकर शहीदों के सपनों को पूरा करने का संकल्प लिया गया।

वक्ताओं ने कहा कि आज भगतसिंह और उनके साथियों को याद करने का एक ही मतलब है कि अन्धाधुन्ध बढ़ती पूँजीवादी-साम्राज्यवादी लूट के खिलाफ़ लड़ाई के लिए उनके सन्देश को देश के मेहनतकशों के पास लेकर जाया और उन्हें संगठित किया जाये। धार्मिक कट्टरपंथ और संकीर्णता के विरुद्ध आवाज़ उठायी जाये और जनता को आपस में लड़ाने की हर साज़िश का डटकर विरोध किया जाये।

तीन दिवसीय इस शहीद मेले में बड़ी संख्या में आम आबादी ने शिरकत की। नौजवानों एवं बच्चों में इस मेले के प्रति विशेष रूप से आकर्षण देखा गया। मेले में विभिन्न स्टालों के साथ ही क्रान्तिकारी साहित्य और पोस्टरों के स्टॉल भी लगाये गये थे। **– संवाददाता**

भगतसिंह, सुखदेव, राजगुरु के 84वें शहादत दिवस पर नरवाना में लगा शहीद मेला!

23 मार्च नरवाना में शहीद भगतसिंह, सुखदेव, राजगुरु को याद करते हुए नौजवान भारत सभा द्वारा शहीद मेले लगया गया। शहीद मेले में क्रान्तिकारी गीतों, नाटकों व बाल प्रतियोगिता आयोजित की गयी। मेले की शुरुआत विहान सांस्कृतिक टोली ने "रंग दे बंसती चोला" से की। इसके बाद मौजूदा मुद्दों पर भाषण प्रतियोगित संचालित की गयी। जिसमें नरवाना के विभिन्न स्कूली बच्चों ने हिस्सेदारी की। साथ ही कविता पाठ द्वारा मौजूद समय में महिलाओं पर बढ़ते हमले को भी बयान किया गया।

मंच सचांलन कर रहे उमेद ने बताया शहीद मेले का मकसद हैं कि आज शहीदों के सही विचारों को जनता तक पहुँचाया जाये। वैसे भी भारत के क्रान्तिकारी आन्दोलन में 23 मार्च 1931 सबसे ऐतिहासिक दिनों में से एक है। इसी दिन बहादुर नौजवान शहीद-ए- आज़म भगतसिंह, सुखदेव व राजगुरु ने फाँसी का फन्दा चूमा था। शायद आज देश का कोई कोना ऐसा नहीं है जहाँ भगतसिंह और उनके साथियों की शहादत को याद नहीं किया जाता है। वैसे अग्रेंजी हुक्मराने से लेकर 47 के बाद सत्ता में बैठे देशी हुक्मरान तक भगतसिंह और उनके साथियों के विचारों को ख़तरनाक मानती है तभी उनके विचारों को दबाने- छिपाने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ती है सोचो दोस्तो अखिर शहीदों के शहादत के 84 साल बाद भी ये विचार इतने ख़तरनाक क्यों है? भगतसिंह और उनके साथियों का स्पष्ट मानना था कि भारत में हम भारतीय श्रमिकों के शासन से कम कुछ नहीं चाहते। हम गोरी बुराई की जगह काली बुराई को लाकर कष्ट नहीं उठाना चाहते। भगतसिंह और उनके साथियों ने उसी समय यह बता दिया था कि पूँजीवाद नेतृत्व में चलने वाला आजादी का संघर्ष किसी न किसी समझौते पर ही खत्म होगा और देश मज़दूर-किसानों और आम मेहनतकश आबादी को असल में कुछ भी हासिल नहीं। 68 साल की आधी-अधूरी आज़ादी के बाद फ़रनामा हमारे सामने जिसमें जानलेवा महँगाई , भूख से मरते बच्चे, गुलामों की तरह खटते मज़दूर, करोड़ो बेरोज़गार युवा, ग़रीब किसानों की छिनती ज़मीनें, देशी-विदेशी पूँजीपतियों की लूट की की खुल छूट - साफ़ है शहीदों का शोषणविहीन, बराबरी और भाईचारे पर आधाारित, ख़ुशहाल भारत का सपना पूरा नहीं हो सका। ऐसे में हमें शहीद-ए-आज़म भगतसिंह की ये बात हमेशा याद रखनी चाहिए। वो इंसानों को मार सकते है लेकिन विचारों को नहीं। इसलिए हमें मेहनतकश जनता की सच्ची आज़ादी के लिए शहीदों के विचारों को हर इंसाफ़पसन्द नौजवान तक पहुँचाना होगा।

मेले में दो नुक्कड़ नाटक खेले गये "देश को आगे बढ़ाओ" और 'राजा का बाजा"। साथ ही तर्कशील सोसइटी द्वारा अंधाविश्वास के ख़िलाफ़ एक मैजिक शो भी दिखया गया। शहीद मेले का समापन एक जूलूस के साथ किया गया जो जो नेहरू पार्क से भगतसिंह चौक तक निकाला गया। इसमें नौजवानों ने गगनभेदी नारे उठाये 'अमर शहीदों का पैगाम,जारी रखना है संग्राम' 'भगतसिंह तुम ज़िन्दा हो हम सबके संकल्पों में' भगतसिंह की बात सुनो, नई क्रान्ति की राह चलो'। नौजवान भारत सभा के अरविन्द ने बताया की आज शहीदों को याद करने का मकसद सिर्फ रस्मअदायगी पूरा करना नहीं बल्कि उनके सपनों को संकल्प में ढालकर लोगों के बीच फिर से बदलाव की उम्मीद पैदा करना है। इसलिए हम हर उस नौजवान को ललकारते हैं जो चारों ओर हो रहे अन्याय के ख़िलाफ़ संघर्ष के लिए खड़ा होना चाहता है।

यमन पर सऊदी अरब का हमला

इस्लामिक राजतंत्र और अमेरिकी साम्राज्यवाद के गँठजोड़ ने रचा एक और देश में मौत का तांडव

मार्च के अन्तिम सप्ताह में सऊदी अरब ने अपने दक्षिण-पश्चिम स्थित पड़ोसी मुल्क यमन पर हवाई हमले शुरू कर दिये। इस लेख के लिखे जाने तक सऊदी हमले में 200 बच्चों सहित 1000 से भी ज़्यादा मौतें हो चुकी हैं जिनमें अधिकांश यमन के नागरिक हैं। इस हमले में अमेरिका एवं 'गल्फ कोऑपरेशन काउंसिल' के अरब मुल्क़ सऊदी अरब का साथ दे रहे हैं। अरब जगत के सबसे ग़रीब मुल्क़ की आम जनता के लिए यह हमला बेइन्तहा तबाही और बर्बादी का मंज़र लेकर आया है। पूरे यमन में खाद्य पदार्थों एवं दवा जैसी बुनियादी ज़रूरतों की अनुपलब्धता का भी संकट मंडराने लगा है।

सऊदी अरब के नेतृत्व में यह हमला यमन में हूथी नामक ज़ायदी शिया विद्रोहियों द्वारा यमन की राजधानी साना पर कब्ज़े के बाद किया गया। यमन का राष्ट्रपति अब्देल रैब्बो मंसूर हादी यमन छोड़कर भाग गया है और उसने सऊदी अरब में पनाह ली है। ग़ौरतलब है कि हूथी विद्रोही एक कबीलियाई समुदाय से आते हैं जो उत्तरी यमन के पहाड़ी इलाक़ों के बाशिन्दे हैं और अपने लड़ाकूपन के लिए विख्यात हैं। हूथियों की अभूतपूर्व सफलता का एक प्रमुख कारण पूर्व राष्ट्रपति अली अब्दुल्ला सालेह से उनका अवसरवादी गँठजोड़ भी है। यमन की फौज का बड़ा हिस्सा सालेह की सरपरस्ती में होने की वजह से ही इस गँठजोड़ ने राजधानी पर कब्ज़ा करके एक बड़ी कामयाबी हासिल की। लेकिन ग़ौर करने वाली बात यह है कि अभी कुछ ही वर्षों पहले जब सालेह यमन का राष्ट्रपति था तो उसने कम से कम छह बार हूथियों पर फौजी कार्रवाई की थी। हूथी समुदाय का संस्थापक हुसेन बद्रेदीन अल-हूथी सालेह की सेना की कार्रवाई में ही मारा गया था। लेकिन 2011 में ट्यूनिशिया में शुरू हुई जनबग़ावत की आग जब मिस्र होते हुए यमन तक पहुँची तो सालेह को 2012 में गद्दी छोड़ने पर मज़बूर होना पड़ा था और उसकी जगह मंसूर हादी राष्ट्रपति बना था। लेकिन आज भी सालेह अपने बेटे को राष्ट्रपति बनाना चाहता है और इसीलिए उसने हूथियों से मौकापरस्त गँठजोड़ बनाया है।

हूथियों को ईरान का भी सैन्य एवं नैतिक समर्थन प्राप्त है क्योंकि शिया होने की वजह से उनकी वैचारिक क़रीबी अयोतोल्लाह खोमैनी के ईरान से है। इराक, सीरिया और लेबनान में ईरान के प्रभुत्व को लेकर सऊदी अरब पहले ही चिन्तित था, हूथियों द्वारा राष्ट्रपति महल पर कब्ज़े के बाद सऊदी अरब के शेख यमन में ईरान का दबदबा बढ़ने की सम्भावना को लेकर सकते में आ गये और इसीलिए उन्होंने बौखलाहट में आकर यमन पर हमला किया है। परन्तु उन्हें इस सच्चाई का भी एहसास है कि केवल हवाई हमलों से वे हूथियों को परास्त नहीं कर सकते। चूँकि सऊदी अरब के पास आधुनिक थल सेना नहीं है इसलिए उसने पाकिस्तान और मिस्र जैसे देशों से सैन्य मदद की गुहार लगायी। मिस्र तो सैन्य मदद के लिए तैयार हो गया लेकिन पाकिस्तान ने इससे इन्कार कर दिया है।

ग़ौरतलब है कि 1932 में इब्न सऊद द्वारा सऊदी राजतंत्र स्थापित करने और सऊदी अरब में तेल की खोज के बाद उसके अमेरिका से गँठजोड़ से पहले यमन अरब प्रायद्वीप का सबसे प्रभुत्वशाली देश था। सऊदी राजतंत्र के अस्तित्व में आने के दो वर्ष के भीतर ही सऊदी अरब व यमन में युद्ध छिड़ गया जिसके बाद 1934 में हुए ताईफ़ समझौते के तहत यमन को अपना कुछ हिस्सा सऊदी अरब को लीज़ पर देना पड़ा और यमन के मज़दूरों को सऊदी अरब में काम करने की मंजूरी मिल गई। नाज़रान, असीर, जिज़ान जैसे इलाक़ों की लीज़ ख़त्म होने के बावजूद सऊदी अरब ने वापस ही नहीं किया जिसको लेकर यमन में अभी तक असंतोष व्याप्त है। ग़ौरतलब है कि ये वही इलाक़े हैं जहाँ शेखों के निरंकुश शासन के ख़िलाफ़ बग़ावत की चिंगारी भी समय-समय पर भड़कती रही है। यमन पर सऊदी हमले की वजह से जहाँ एक ओर यमन के भीतर राष्ट्रीय एकता की भावना पैदा हुई है वहीं सऊदी अरब के इन शिया बहुसंख्या वाले इलाक़ों में भी बग़ावत की चिंगारी एक बार फिर भड़कने की सम्भावना बढ़ गई है।

उधर इराक़ और सीरिया में इस्लामिक कट्टरपंथ और अमेरिकी साम्राज्यवाद के बीच नापाक गँठजोड़ की पैदाइश इस्लामिक स्टेट अपना कहर जारी रखे हुए है। इस नापाक गँठजोड़ ने यमन में जो हमला किया है वह समूचे अरब जगत में जारी हिंसा की आग को और भड़कायेगा और आने वाले दिनो में भीषण रक्तपात को अंजाम देगा। लेकिन यह भी तय है कि इसी आग में अरब के शेखों और शाहों की मानवद्रोही सत्तायें भी जलकर राख हो जायेंगी।

– आनन्द सिंह

वियतनाम में मज़दूरों की जुझारू एकजुटता ने ज़ुल्मी हुक़्मरानों को झुकाया

वियतनाम के हो ची मिन्ह शहर में नाइकी और एडिडास जैसी साम्राज्यवादी लुटेरी कम्पनियों के लिए जूते बनाने वाली एक कम्पनी के हज़ारों मज़दूरों ने पिछले महीने के अन्त में मज़दूर वर्ग की जुझारू एकजुटता का एक शानदार नमूना पेश कर वहाँ की सरकार को झुकने पर मजबूर कर दिया।

ताइवानी जूता कम्पनी पाऊ यूएन में काम करने वाले करीब 90,000 मज़दूरों ने सरकार के प्रस्तावित बीमा क़ानून के विरोध में 26 मार्च से हड़ताल का ऐलान कर दिया। हो ची मिन्ह शहर के तान ताओ औद्योगिक इलाक़े में इन मज़दूरों को एकजुट होता देख अन्य कारखानों के मज़दूर भी इस हड़ताल के समर्थन में आने लगे और देखते ही देखते यह हड़ताल एक व्यापक मज़दूर आन्दोलन की शक्ल अख़्तियार करने लगी। आसपास की फैक्ट्रियों में भी हड़ताल के फैलने का ख़तरा मँडराने लगा। 1 अप्रैल को हो ची मिन्ह शहर के नज़दीक एक दूसरे शहर में भी एक कारखाने के मज़दूर हड़ताल में शामिल हो गए। मज़दूरों की इस अभूतपूर्व एकजुटता को देखते हुए ताइवान के संशोधनवादी हुक़्मरान सकते में आ गए। प्रधानमंत्री न्यूएन तान दुंग द्वारा नये बीमा क़ानून को वापस लेने से संबन्धित मज़दूरों की माँगें मानने के आश्वासन के बाद मज़दूरों ने अपनी एक सप्ताह तक चली हड़ताल को समाप्त किया।

ग़ौरतलब है कि पिछले कुछ वर्षों से ताइवान नाइकी और एडिडास जैसी जूता कम्पनियों से लेकर कपड़ा कम्पनियों द्वारा मज़दूरों की मेहनत की लूट का खुला चारागाह बना हुआ है। दक्षिण कोरिया, चीन और ताइवान जैसे देशों में पिछले कुछ वर्षों में श्रम की लागत बढ़ जाने की वजह से तमाम साम्राज्यवादी राष्ट्रपारीय निगमों ने अपने उत्पादन को वियतनाम, इंडोनेशिया और बांग्लादेश जैसे देशों की ओर मोड़ा है जहाँ मज़दूरों से नरक जैसे हालात में काम करवाकर वे अतिलाभ निचोड़ रहे हैं। भूमण्डलीकरण के युग में पूरी दुनिया के पैमाने पर एक विश्वव्यापी अदृश्य असेंबली लाइन का निर्माण हुआ है जिसमें किसी उत्पाद के सभी हिस्से एक ही कारखाने में बनने की बजाय अलग-अलग कारखानों में बनते हैं और उनकी असेंबलिंग भी अलग कारखाने में होती है। पश्चिमी देशों में अपनी छीछालेदर से बचने के लिए ये दैत्याकार निगम उत्पादन का काम खुद से नहीं बल्कि ठेकेदारों और उप ठेकेदारों के ज़रिये करवाते हैं जो मज़दूरों का निर्ममता से शोषण करने में पारंगत होते हैं।

वियतनाम में शासन करने वाली पार्टी खुद को कम्युनिस्ट पार्टी कहती है लेकिन कम्युनिज़्म के उसूलों एवं मज़दूर वर्ग से विश्वासघात का आलम यह है कि वह 1980 के दशक से ही नवउदारवाद की राह पर चलती आयी है। साम्राज्यवादियों के दबाव में वह मज़दूर वर्ग के बचे-खुचे अधिकारों को भी छीनने में जी जान से जुटी है। हाल ही में इस पार्टी ने श्रमिकों के पेंशन से संबन्धित एक नये क़ानून को पारित करवाया है जिसको अगले वर्ष से लागू होना है। मज़दूरों को इस क़ानून से आपत्ति यह थी कि इसके लागू होने के बाद मज़दूरों को सामाजिक सुरक्षा के रूप में मिलने वाला वाली पेशन की राशि किसी भी सूरत में उनको रिटायरमेंट के पहले नही मिल सकेगी। इसके अलावा मज़दूर रिटायरमेंट की उम्र बढ़ाने की भी माँग कर रहे थे। ग़ौरतलब है कि वियतनाम की संशोधनवादी सरकार विश्वबैंक व आईएमएफ के निर्देशानुसार नवउदारवादी नीतियाँ मज़दूरों पर थोपने की पूरी तैयारी कर चुकी है।

वियतनाम के मज़दूरों की यह हड़ताल इस मायने में महत्वपूर्ण रही कि मज़दूर केवल अपनी फैक्ट्री के मालिक के ख़िलाफ़ ही नहीं बल्कि मालिकों के समूचे वर्ग की नुमाइंदगी करने वाली सरकार की नीतियों के ख़िलाफ़ एकजुट हुए और उनकी माँगें सामाजिक सुरक्षा जैसे अहम मसले से जुड़ी थीं। वियतनाम जैसे देश में जहाँ मज़दूर आन्दोलन कम ही सुनने में आते हैं, इतनी बड़ी हड़ताल यह संकेत दे रही है कि भूमण्डलीकरण के दौर में नवउदारवादी नीतियों के ख़िलाफ़ दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में मज़दूर वर्ग का गुस्सा स्वत:स्फूर्त रूप से फूट रहा है। एक हालिया रिपोर्ट के मुताबिक पिछले कुछ वर्षों में चीन में भी मज़दूरों की हड़तालों में जबर्दस्त बढ़ोतरी हुई है। पूँजीवाद का संकट खुद ही मज़दूर वर्ग में असंतोष की भावना पैदा कर रहा है। ऐसे में ज़रूरत इस बात की है कि मज़दूर वर्ग के आक्रोश को व्यवस्था परिवर्तन की ओर मोड़ा जाये।

– आनन्द

पंजाब में क्रान्तिकारी जन संगठनों द्वारा साम्प्रदायिकता विरोधी जन सम्मेलन का आयोजन

बीते 22 मार्च 2015 को लुधियाना की ई.डब्ल्यू.एस. कॉलोनी (ताजपुर रोड) में पाँच संगठनों टेक्सटाईल-होज़री कामगार यूनियन, पंजाब, नौजवान भारत सभा, कारख़ाना मज़दूर यूनियन, पंजाब, पंजाब स्टूडेंटस यूनियन (ललकार) और बिगुल मज़दूर दस्ता द्वारा साम्प्रदायिकता के विरोध में सम्मेलन का आयोजन किया गया। पंजाब के अलग-अलग इलाक़ों से पहुँचे मज़दूरों, मेहनतक़शों, नौजवानों, विद्यार्थियों, बुद्धिजीवियों ने धार्मिक साम्प्रदायिकता के ख़िलाफ़ एकजुट आन्दोलन खड़ा कर जुझारू संघर्ष करने का प्रण किया। यह सम्मेलन महान क्रान्तिकारी शहीद भगत सिंह, सुखदेव और राजगुरू की 84वीं शहादत वर्षगाँठ को समर्पित किया गया।

साम्प्रदायिकता मुर्दाबाद!, लोक एकता जिन्दाबाद!, अमर शहीदों का पैग़ाम, जारी रखना है संग्राम!, आदि गगन-भेदी नारों और क्रान्तिकारी सांस्कृतिक मंच 'दस्तक' द्वारा पेश क्रान्तिकारी गीत-संगीत के साथ शुरुआत हुआ। साम्प्रदायिकता विरोधी इस सम्मेलन को अलग-अलग संगठनों के नेताओं ने सम्बोधित किया।

वक्ताओं ने कहा कि साम्प्रदायिक फासीवाद इस समय बहुत बड़ा खतरा बन चुका है जिसे बहुत गम्भीरतापूर्वक लेना चाहिए। हिन्दुत्ववादी कट्टरपंथियों की ताक़त अधिक होने के चलते अल्पसंख्यक धर्मों की जनता मुस्लमानों, इसाईयों, सिक्खों पर बड़ा ख़तरा मँडरा रहा है। आर.एस.एस. (भाजपा जिसका राजनीतिक संसदीय संगठन है) अपने, दर्जनों रंग-बिरंगे संगठनों-संस्थाओं द्वारा हिन्दुत्ववादी साम्प्रदायिकता का गन्दा खेल खेल रहा है। हिन्दुत्ववादी कट्टरपंथियों की काली करतूतों का फायदा उठाकर अल्पसंख्यक धर्मों के साम्प्रदायिक कट्टरपंथी भी सभी हिन्दुओं को ही अल्पसंख्यकों का दुश्मन बताकर अपनी राजनीतिक रोटियाँ सेंक रहे हैं।

साम्प्रदायिकता फैलाने के पीछे छिपी साज़िशों के बारे में बात करते हुए वक्ताओं ने कहा कि पूँजीवादी हुक्मरान साम्प्रदायिकता फैलाकर, जनता के भाईचारे और वर्गीय एकता को कमज़ोर करके घोर जन-विरोधी उदारीकरण-निजीकरण-भूमण्डलीकरण की नीतियाँ आगे बढ़ाना चाहते हैं। पिछले ढाई दशकों में इन नीतियों ने जनता की हालत बद से बदतर कर दी है और पूँजीवादी हुक्मरानों के खिलाफ़ भारी गुस्सा पैदा हुआ है। इस समय विश्व पूँजीवादी अर्थव्यवस्था और इसी के एक अंग के तौर पर भारतीय अर्थव्यवस्था गम्भीर आर्थिक मन्दी का शिकार है और यह मन्दी लगातार गहराती जा रही है। महँगाई, बेरोज़गारी, ग़रीबी, बदहाली बहुत तेज़ी से बढ़ रही है। मज़दूरों को पहले ही न के बराबर श्रम अधिकार हासिल हैं और ऊपर से सरकार द्वारा श्रम क़ानूनों में गम्भीर मज़दूर विरोधी संशोधन किए जा रहे हैं। जनता से सरकारी सेहत, शिक्षा, परिवहन, पानी, बिजली आदि सहूलियतें बड़े स्तर पर छीनी जा रही हैं। जनता से ज़मीनें जबरन छीनकर देशी-विदेशी पूँजीपतियों को दी जा रही हैं और इसलिए घोर जन-विरोधी क़ानून पारित किये जा रहे हैं। ऐसी हालत में जनता के विरोध को कुचलने के लिए ज़रूरी है कि जनता के जनवादी अधिकार छीने जाएँ, जनता में फूट डाली जाये। जैसे-जैसे उदारीकरण की नीतियों को सख्ती से लागू किया गया है वैसे-वैसे साम्प्रदायिक ताक़तें भी और ज़्यादा सक्रिय होती गई हैं और हिन्दुत्ववादी फासीवाद का ख़तरा बढ़ता गया है। केन्द्र में कुछ महीने पहले बनी मोदी सरकार ने उदारीकरण-निजीकरण-भूमण्डलीकरण की नीतियों को सख्ती के साथ लागू करने की प्रक्रिया में तेज़ की है और इसी दौरान हिन्दुत्ववादी साम्प्रदायिक ताक़तें और भी आतंक मचा रही हैं। हिन्दुत्ववादी कट्टरपंथियों द्वारा अल्पसंख्यकों खासकर मुसलमानों और ईसाईयों के खिलाफ़ कुत्सा-प्रचार और हिंसक हमलों में बहुत बढ़ोतरी हुई है।

वक्ताओं ने कहा कि धर्म के नाम पर होने वाले दंगों और कत्लेआमों में औरतों को बड़े पैमने पर निशाना बनाया जाता है। सभी धर्मों के कट्टरपंथी औरतों की मानवीय आज़ादी के घोर विरोधी हैं। हिन्दुत्ववादी कट्टरपंथी भी यही कुछ करते हैं। हिन्दुत्ववादी कट्टरपंथी दलितों के भी घोर विरोधी हैं और उन पर जाति आधारित दबाव क़ायम रखना चाहते हैं। पंजाब में यू.पी.-बिहार और अन्य राज्यों से आई जनता के खिलाफ नफ़रत भड़काने की साजिशें भी तेज़ हुई हैं। खालिस्तानी कट्टरपंथी सिक्खों को सभी हिन्दुओं और अलग-अलग डेरों के पैरोकारों के खिलाफ़ भड़का रहे हैं।

वक्ताओं ने कहा कि सरकारों, पुलिस, प्रशासन, अदालतों से जनता को इंसाफ़ की उम्मीद नहीं रखनी चाहिए। जनता का आपसी भाईचारा और एकजुटता ही जनता का सहारा बन सकती है। सन 1984 के सिक्खों के क़त्लेआम, गुजरात-2002 में मुसलमानों के क़त्लेआम, ओडीशा-2007-08 में ईसाइयों के क़त्लेआम समेत प्रत्येक धार्मिक क़त्लेआम और दंगों में दोषियों को सजा नहीं मिली। जनता का आपसी भाईचारा ही दंगों-क़त्लेआमों में जनता का सहारा बनता रहा है और जनता की एकजुट ताक़त ही इंसाफ़ दिला सकती है।

वक्ताओं ने कहा कि भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरू की शहादत को समर्पित इस साम्प्रदायिकता विरोधी सम्मेलन में हमें साम्प्रदायिक ताकतों के खिलाफ़ तीखे संघर्ष का प्रण लेना होगा। साम्प्रदायिक फासीवाद के खिलाफ़ संघर्ष क्रान्तिकारी, जनवादी, धर्मनिरपेक्ष, इंसाफ़पसंद जनता से भारी कुर्बानियों की माँग करता है। हिटलर-मुसोलिनी की भारतीय फासीवादी औलादों को मिट्टी में मिलाने के लिए जनता को बेहद कठिन संघर्ष करना पड़ेगा।

वक्ताओं ने कहा कि सभी धर्मों के साथ जुड़ी साम्प्रदायिकता जनता की दुश्मन है और इसके खिलाफ़ सभी धर्मनिरपेक्ष और जनवादी ताकतों को आगे आना होगा। मज़दूरों, किसानों और अन्य मेहनतक़शों, नौजवानों, विद्यार्थियों, औरतों के आर्थिक-सामाजिक-राजनीतिक अधिकारों के लिए किया गया जुझारू आन्दोलन ही हर तरह की साम्प्रदायिकता का मुक़ाबला कर सकता है। धर्म जनता का निजी और दूसरे दर्जे का मसला है। जनता को वर्गीय आधार पर न कि धर्म के आधार पर एक होना चाहिए और लुटेरे वर्गों के खिलाफ़ वर्ग संघर्ष करना चाहिए।

सम्मेलन को बिगुल मज़दूर दस्ता के नेता सुखविन्दर, टेक्सटाइल-होज़री कामगार यूनियन, पंजाब के अध्यक्ष राजविन्दर, पंजाब स्टूडेंटस यूनियन (ललकार) के अध्यक्ष छिन्दरपाल, नौजवान भारत सभा के नेता कुलविन्दर, स्त्री मुक्ति लीग की नमिता ने सम्बोधित किया। संचालन कारखाना मज़दूर यूनियन, पंजाब के अध्यक्ष लखविन्दर ने किया। सम्मेलन में शामिल होने के लिए महाराष्ट्र से आयेहर्ष ठाकुर ने भी सम्बोधित किया और कहा कि यह सम्मेलन अच्छा प्रयास है। मोल्डर एण्ड स्टील वर्कर्स यूनियन के अध्यक्ष हरजिन्दर सिंह आदि ने भी सम्मेलन को सम्बोधित किया। क्रान्तिकारी सांस्कृतिक मंच, दस्तक के कुलविन्दर, गविश, गुरमीत लक्की, कुलदीप आदि ने क्रान्तिकारी गीत-संगीत पेश किया। इस अवसर पर जनचेतना और ज्ञान प्रसार समाज द्वारा क्रान्तिकारी-प्रगतिशील-वैज्ञानिक किताबों-पोस्टरों की प्रदर्शनियाँ भी लगाई गईं।

इससे पूर्व सम्मेलन की तैयारी के लिए पंजाब के विभिन्न इलाक़ों में साम्प्रदायिकता विरोधी व्यापक प्रचार मुहिम चलाई गई थी। जनता को साम्प्रदायिकता के खिलाफ़ जागरूक करने के लिए बड़े स्तर पर मीटिंगों, नुक्कड़ सभाओं, पैदल/साइकिल/मोटरसाईकल मार्च, घर-घर प्रचार अभियान चलाया गया था। पंजाबी-हिंदी में बड़े स्तर पर पर्चा बाँटा गया और पोस्टर लगाए गए। शहीद भगत सिंह का लेख 'साम्प्रदायिक दंगे और उनका इलाज' भी पर्चे के रूप में छापकर बाँटा गया था।

– बिगुल संवाददाता

'धर्म की उत्पत्ति व विकास, वर्ग समाज में इसकी भूमिका' विषय पर विचार गोष्ठी का आयोजन

12 अप्रेल 2015 को लुधियाना में उपरोक्त विषय पर बिगुल मज़दूर दस्ता व नौजवान भारत सभा ने एक विचार संगोष्ठी का आयोजन किया। इस विचार संगोष्ठी में का. कश्मीर ने मुख्य वक्ता के तौर पर बात रखी। उन्होंने विस्तार से बात रखते हुए साबित किया कि समाज के वर्गों में बँटने, यानि शोषकों व शोषितों में बँटने, के साथ ही संगठित धर्म अस्तित्व में आया। उत्पादन शक्तियों के विकास के कारण समाज वर्गों में बँटा, आदिम साम्यवादी समाज की जगह गुलामदारी व्यवस्था ने ली और इसी समय धर्म अस्तित्व में आया।

का. कश्मीर ने कहा कि समाज की भौतिक-आर्थिक परिस्थितियों से ही सामाजिक चेतना जन्म लेती है और इन परिस्थितियों के बदलने से सामाजिक चेतना भी देर-सवेर बदल जाती है। धर्म भी मानव समाज की आर्थिक परिस्थितियों के बदलने से लगातार बदलता आया है। उन्होंने कहा कि धर्म ने हमेशा शोषक वर्ग व्यवस्था की सेवा की है। जब तक वर्ग व्यवस्था कायम रहेगी तब तक धर्म का ख़ात्मा भी सम्भव नहीं है इसलिए धर्म के आधार पर होने लूट-शोषण के खात्मे की लड़ाई को वर्ग समाज के ख़ात्मे की लड़ाई, कम्युनिस्ट व्यवस्था कायम करने की लड़ाई के साथ जोड़ना होगा।

संगोष्ठी में राजविन्दर, नन्दलाल, किशोर, आदि ने भी विचार-चर्चा में हिस्सा लिया। मंच संचालन लखविन्दर ने किया।

– बिगुल संवाददाता

केजरीवाल सरकार के आदेश पर 25 मार्च 2015 को दिल्ली सचिवालय के बाहर मज़दूरों पर बर्बर लाठी चार्ज की घटना का पूरा ब्यौरा

हम हार नहीं मानेंगे! हम लड़ना नहीं छोड़ेंगे!

• अभिनव सिन्हा

25 मार्च को दिल्ली में मज़दूरों पर जो लाठीचार्ज हुआ वह दिल्ली में पिछले दो दशक में विरोध प्रदर्शनों पर पुलिस के हमले की शायद सबसे बर्बर घटनाओं में से एक था। ध्यान देने की बात यह है कि इस लाठीचार्ज का आदेश सीधे अरविन्द केजरीवाल की ओर से आया था, जैसाकि मेरे पुलिस हिरासत में रहने के दौरान कुछ पुलिसकर्मियों ने बातचीत में ज़िक्र किया था। कुछ लोगों को इससे हैरानी हो सकती है क्योंकि औपचारिक रूप से दिल्ली पुलिस केन्द्र सरकार के मातहत है। लेकिन जब मैंने पुलिसवालों से इस बाबत पूछा तो उन्होंने बताया कि रोज़-ब-रोज़ की क़ानून-व्यवस्था बनाये रखने के लिए दिल्ली पुलिस को दिल्ली के मुख्यमन्त्री के निर्देशों का पालन करना होता है, जब तक कि यह केन्द्र सरकार के किसी निर्देश/आदेश के विपरीत नहीं हो। 'आप' सरकार अब मुसीबत में पड़ चुकी है क्योंकि वह दिल्ली के मज़दूरों से चुनाव में किये वायदे पूरा नहीं कर सकती। और दिल्ली के मज़दूर 'आप' और अरविन्द केजरीवाल द्वारा उनसे किये गये वायदे को भूलने से इनकार कर रहे हैं। मालूम हो कि बीती 17 फ़रवरी को, दिल्ली यूनिवर्सिटी के स्कूल ऑफ़ लर्निंग के छात्रों ने ख़ासी तादाद में वहाँ पहुँचकर मुख्यमन्त्री को ज्ञापन दिया। इसके बाद, 3 मार्च को डीएमआरसी के सैकड़ों ठेका कर्मचारी केजरीवाल सरकार को अपना ज्ञापन देने गये थे और वहाँ उन पर भी लाठीचार्ज किया गया।

इस महीने के शुरुआत से ही विभिन्न मज़दूर संगठन, यूनियन, महिला संगठन, छात्र एवं युवा संगठन 'वादा न तोड़ो अभियान' चला रहे हैं, जिसका मकसद है केजरीवाल सरकार को उनके द्वारा दिल्ली के ग़रीब मज़दूरों के साथ किये गये वायदे जैसेकि नियमित प्रकृति के काम में ठेका प्रथा को ख़त्म करना, बारहवीं तक मुफ़्त शिक्षा, दिल्ली सरकार में पचपन हज़ार ख़ाली पदों को भरना, सत्रह हज़ार नये शिक्षकों की भर्ती करना, सभी घरेलू कामगारों और संविदा शिक्षकों को स्थायी करना, इत्यादि, की याद दिलाना और इसके

बाद सरकार को ऐसा करने के लिए बाध्य करना। 25 मार्च के प्रदर्शन की सूचना केजरीवाल सरकार और पुलिस प्रशासन को पहले से ही दे दी गयी थी और पुलिस ने पहले से कोई निषेधाज्ञा लागू नहीं की थी। लेकिन 25 मार्च को जो हुआ वह भयानक था और क्योंकि मैं उन कार्यकर्ताओं में से एक था जिन पर पुलिस ने हमला किया, धमकी दी और गिरफ़्तार किया, मैं बताना चाहूँगा कि 25 मार्च को हुआ क्या था, क्यों हज़ारों मज़दूर, महिलाएँ और छात्र दिल्ली सचिवालय गये, उनके साथ कैसा व्यवहार हुआ और किस तरह मुख्यधारा के मीडिया चैनलों और अख़बारों ने मज़दूरों, महिलाओं और छात्रों पर हुए बर्बर दमन को बहुत आसानी से ब्लैकआउट कर दिया।

25 मार्च को हज़ारों मज़दूर, महिलाएँ और छात्र दिल्ली सचिवालय क्यों गये?

जैसा पहले बताया जा चुका है, कई मज़दूर संगठन अरविन्द केजरीवाल को उन वायदों की याद दिलाने के लिए पिछले एक महीने से दिल्ली में 'वादा न तोड़ो अभियान' चला रहे हैं जो उनकी पार्टी ने दिल्ली के मज़दूरों से किये थे। इन वायदों में शामिल हैं नियमित प्रकृति के काम में ठेका प्रथा ख़त्म करना; दिल्ली सरकार में पचपन हज़ार ख़ाली पदों को भरना; सत्रह हज़ार नये शिक्षकों की भर्ती करना और संविदा शिक्षकों को स्थायी करना; सभी संविदा सफ़ाई कर्मचारियों को स्थायी करना; बारहवीं कक्षा तक स्कूली शिक्षा मुफ़्त करना; ये वायदे तत्काल पूरे किये जा सकते हैं। हम जानते हैं कि सभी झुग्गीवासियों के लिए मकान बनाने में समय लगेगा; फिर भी, दिल्ली की जनता के सामने एक रोडमैप प्रस्तुत किया जाना चाहिए। इसी तरह, हम जानते हैं कि बीस नये कॉलेज उपलब्ध कराने में समय लगेगा; हालाँकि केजरीवाल मीडिया से कह चुके हैं कि कुछ व्यक्तियों ने दो कॉलेजों के लिए ज़मीन दी है और उन्हें यह ज़रूर बताना चाहिए कि वो ज़मीनें कहाँ हैं और राज्य सरकार इन कॉलेजों का निर्माण कब शुरू करने जा रही है। ऐसा नहीं है कि केजरीवाल ने अपने किसी वायदे को पूरा नहीं किया। उन्होंने दिल्ली के फ़ैक्टरी मालिकों और दुकानदारों से किये वायदे तत्काल पूरे किये! और उन्होंने ठेका मज़दूरों के लिए क्या किया? कुछ भी नहीं, सिवाय केवल सरकारी विभागों के ठेका मज़दूरों के बारे में एक दिखावटी अन्तरिम आदेश जारी करने के, जो कहता है कि सरकारी विभागों/निगमों में काम करने वाले किसी ठेका कर्मचारी को अगली सूचना तक बर्ख़ास्त नहीं किया जायेगा। हालाँकि, कुछ दिनों बाद ही अख़बारों में ख़बर आयी कि इस दिखावटी अन्तरिम आदेश के मात्रा कुछ दिनों बाद ही दर्जनों होमगार्डों को बर्ख़ास्त कर दिया गया! इसका साधारण सा मतलब है कि अन्तरिम आदेश सरकारी विभागों में ठेका मज़दूरों और दिल्ली की जनता को बेवक़ूफ़ बनाने का दिखावा मात्र था। इन कारकों ने दिल्ली के मज़दूरों के बीच सन्देह पैदा किया और इसके परिणामस्वरूप विभिन्न ट्रेड यूनियनों, महिला संगठनों, छात्र संगठनों ने केजरीवाल को दिल्ली की आम मज़दूर आबादी से किये गये अपने वायदों को याद दिलाने के लिए अभियान चलाने के बारे में सोचना शुरू किया।

इसलिए, 3 मार्च को डीएमआरसी के ठेका मज़दूरों के प्रदर्शन के साथ वादा न तोडो अभियान (ॅछअ) की शुरुआत की गयी। उसी दिन, केजरीवाल सरकार को 25 मार्च के प्रदर्शन के बारे में औपचारिक रूप से सूचना दे दी गयी थी और बाद में पुलिस प्रशासन को इस बारे में अधिकारिक तौर पर सूचना दी गयी। पुलिस ने प्रदर्शन से पहले संगठनकर्ताओं को किसी भी प्रकार की निषेधाज्ञा नोटिस जारी नहीं की। लेकिन, जैसे ही प्रदर्शनकारी किसान घाट पहुँचे, उन्हें मनमाने तरीक़े से वहाँ से चले जाने को कहा गया! पुलिस ने उन्हें सरकार को अपना ज्ञापन और माँगपत्रक सौंपने से रोक दिया, जोकि उनका मूलभूत संवैधानिक अधिकार है, जैसेकि, उन्हें सुने जाने का अधिकार, शान्तिपूर्ण एकत्र होने और अभिव्यक्ति का अधिकार।

25 मार्च को वास्तव में क्या हुआ?

दोपहर करीब 1:30 बजे, लगभग 3500 लोग किसान घाट पर जमा हुए। आरएएफ़ और सीआरपीएफ़ को वहाँ सुबह से ही तैनात किया गया था। इसके बाद, मज़दूर जुलूस की शक्ल में शान्तिपूर्ण तरीक़े से दिल्ली सचिवालय की ओर रवाना हुए। उन्हें पहले बैरिकेड पर रोक दिया गया और पुलिस ने उनसे वहाँ से चले जाने को कहा। प्रदर्शनकारियों ने सरकार के किसी प्रतिनिधि से मिलने और उन्हें अपना ज्ञापन देने की बात कही। प्रदर्शनकारियों ने दिल्ली सचिवालय की ओर बढ़ने की कोशिश की। तभी पुलिस ने बिना कोई चेतावनी दिये बर्बर तरीक़े से लाठीचार्ज शुरू कर दिया और प्रदर्शनकारियों को खदेड़ना शुरू कर दिया। पहले चक्र के लाठीचार्ज में कुछ महिला मज़दूर और कार्यकर्ता गम्भीर रूप से घायल हो गयीं और सैकड़ों मज़दूरों को पुलिस ने दौड़ा लिया। हालाँकि, बड़ी संख्या में मज़दूर वहाँ बैरिकेड पर रुके रहे और अपना 'मज़दूर सत्याग्रह' शुरू कर दिया। यद्यपि पुलिस ने कई मज़दूरों को वहाँ से खदेड़कर भगा दिया, फिर भी, लगभग 1300 मज़दूर वहाँ जमे हुए थे और उन्होंने अपना सत्याग्रह जारी रखा था। लगभग 700 संविदा शिक्षक सचिवालय के दूसरी ओर थे, जो प्रदर्शन में शामिल होने आये थे, लेकिन पुलिस ने उन्हें प्रदर्शन स्थल तक जाने नहीं दिया। इसलिए उन्होंने सचिवालय के दूसरी तरफ़ अपना विरोध प्रदर्शन जारी रखा। मज़दूर संगठनकर्ता बार-बार पुलिस से आग्रह कर रहे थे कि उन्हें सचिवालय जाने और अपना ज्ञापन देने दिया जाये। पुलिस ने इससे सीधे इनकार कर दिया। तब संगठनकर्ताओं ने पुलिस को याद दिलाया कि सरकार को ज्ञापन देना उनका संवैधानिक अधिकार है और सरकार इसे स्वीकार करने के लिए बाध्य है। इसके बाद भी, पुलिस ने प्रदर्शनकारियों को सचिवालय जाने और अपना ज्ञापन सौंपने नहीं दिया। तकरीबन डेढ़ घण्टे इन्तज़ार करने के बाद मज़दूरों ने पुलिस को अल्टीमेटम दिया कि यदि आधे घण्टे में उन्हें जाने नहीं दिया गया तो वे सचिवालय की ओर बढ़ेंगे। जब आधे घण्टे के बाद पुलिस ने उन्हें सचिवालय जाने और अपना ज्ञापन सौंपने नहीं दिया, इसके बाद पुलिस ने फिर से लाठीचार्ज किया। इस बार लाठीचार्ज ज़्यादा बर्बर तरीक़े से हुआ।

मैं पिछले 16 वर्ष से दिल्ली के छात्र आन्दोलन और मज़दूर आन्दोलन में सक्रिय रहा हूँ और मैं कह सकता हूँ कि मैंने दिल्ली में किसी प्रदर्शन के विरुद्ध पुलिस की ऐसी क्रूरता नहीं देखी है। महिला मज़दूरों और कार्यकर्ताओं को और मज़दूरों के नेताओं को ख़ासतौर पर निशाना बनाया गया। पुरुष

(पेज 9 पर जारी)

हम हार नहीं मानेंगे! हम लड़ना नहीं छोड़ेंगे!

(पेज 8 से आगे)

पुलिसकर्मियों ने निर्ममता के साथ स्त्रियों की पिटाई की, उन्हें बाल पकड़कर सड़कों पर घसीटा, कपड़े फाड़े, नोच-खसोट की और अपमानित किया। किसी के लिए भी यह विश्वास करना मुश्किल होता कि किस तरह अनेक पुलिसकर्मी स्त्री मज़दूरों और कार्यकर्ताओं को पकड़कर पीट रहे थे। कुछ स्त्री कार्यकर्ताओं को तब तक पीटा गया जब तक लाठियाँ टूट गयीं या स्त्रियाँ बेहोश हो गयीं। मज़दूरों पर नजदीक से आँसू गैस छोड़ी गयी।

सैकड़ों मज़दूर इसके विरोध में शान्तिपूर्ण सत्याग्रह के लिए ज़मीन पर लेट गये, फिर भी पुलिसवाले उन्हें पीटते रहे। आख़िरकार मज़दूरों ने वहाँ से हटकर राजघाट पर विरोध जारी रखने की कोशिश की लेकिन पुलिस और रैपिड एक्शन फ़ोर्स ने वहाँ भी उनका पीछा किया और फिर से पिटाई की। पुलिस ने 17 कार्यकर्ताओं और मज़दूरों को गिरफ़्तार किया जिनमें से एक मैं भी था। मेरे एक साथी, युवा कार्यकर्ता अनन्त को हिरासत में लेने के बाद भी मेरे सामने पीटा गया, भद्दी-भद्दी गालियाँ दीं गयीं। हिरासत में अन्य कार्यकर्ताओं और मज़दूरों के साथ भी ऐसा ही बर्ताव जारी रहा। लगभग सभी गिरफ़्तार व्यक्ति घायल थे और उनमें से कुछ को गम्भीर चोटें आयी थीं।

चार स्त्री कार्यकर्ता शिवानी, वर्षा, वारुणी और वृशाली को हिरासत में लिया गया था और पिटायी में भी उन्हें ख़ासतौर से निशाना बनाया गया था। वृशाली की उँगलियों में फ़्रैक्चर है, वर्षा के पैरों पर बुरी तरह लाठियाँ मारी गयीं, शिवानी की पीठ पर कई पुलिसवालों ने बार-बार चोट की और उनके सिर में भी चोट आयी और वारुणी को भी बुरी तरह पीटा गया। चोटों का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि वारुणी और वर्षा को जमानत पर छूटने के बाद 27 मार्च को फिर से अरुणा आसफअली अस्पताल में भर्ती कराना पड़ा। स्त्री कार्यकर्ताओं को पुलिस वाले लगातार गालियाँ देते रहें। पुलिसकर्मियों ने स्त्री कार्यकर्ता को जैसी अश्लील गालियाँ और अपमानजनक टिप्पणियों का निशाना बनाया जिसे यहाँ लिखा नहीं जा सकता। कार्यकर्ताओं और विरोध प्रदर्शन करने वालों के सम्मान को कुचलने की पुरानी पुलिसिया रणनीति का ही यह हिस्सा था।

गिरफ़्तार किये गये 13 पुरुष कार्यकर्ता भी घायल थे और उनमें से 5 को गम्भीर चोटें आयी थीं। लेकिन उन्हें चिकित्सा उपचार के लिए 8 घण्टे से ज़्यादा इन्तज़ार कराया गया जबकि उनमें से दो के सिर के चोट से ख़ून बह रहा था। आईपी स्टेट थाने में रहने के दौरान कई पुलिसवालों ने हमें बार-बार बताया कि लाठीचार्ज का आदेश सीधे मुख्यमन्त्री कार्यालय से दिया गया था। साथ ही, पुलिस की मंशा शुरू से साफ़ थी - वे विरोध प्रदर्शनकारियों की बर्बर पिटाई करना चाहते थे। उन्होंने कहा कि इसका मकसद सबक सिखाना था।

अगले दिन 4 स्त्री साथियों को जमानत मिल गयी और 13 पुरुष कार्यकर्ताओं को दो दिन के लिए सशर्त जमानत दी गयी। आईपी स्टेट पुलिस थाने को जमानतदारों और गिरफ़्तार लोगों के पते सत्यापित करने के लिए कहा गया। पुलिस गिरफ़्तार कार्यकर्ताओं को 14 दिन की पुलिस हिरासत में लेने की माँग कर रही थी। प्रशासन की मंशा साफ़ है - एक बार फिर कार्यकर्ताओं की पिटायी और यन्त्रणा। पुलिस लगातार हमें फिर से गिरफ़्तार करने और हम पर झूठे आरोप मढ़ने की कोशिश में है। जैसाकि अब पुलिस प्रशासन की रिवायत बन गयी है, जो कोई भी व्यवस्था के अन्याय का विरोध करता है उसे "माओवादी", "नक्सलवादी", "आतंकवादी"" आदि बता दिया जाता है। इस मामले में भी पुलिस की मंशा साफ़ है। इससे यही पता चलता है कि भारत का पूँजीवादी लोकतन्त्र कैसे काम करता है। ख़ासतौर पर राजनीति और आर्थिक संकट के समय में, यह व्यवस्था की नग्न बर्बरता के विरुद्ध मेहनतकश अवाम के किसी भी तरह के प्रतिरोध का गला घोंटकर ही टिका रह सकता है। 25 मार्च की घटनाएँ इस तथ्य की गवाह हैं।

आगे क्या होना है?

शासक हमेशा ही यह मानने की ग़लती करते रहे हैं कि संघर्षरत स्त्रियों, मज़दूरों और छात्रों-युवाओं को बर्बरता का शिकार बनाकर वे विरोध की आवाज़ों को चुप करा देंगे। वे बार-बार ऐसी ग़लती करते हैं। यहाँ भी उन्होंने वही ग़लती दोहरायी है। 25 मार्च की पुलिस बर्बरता केजरीवाल सरकार द्वारा दिल्ली के मेहनतकश ग़रीबों को एक सन्देश देने की कोशिश थी और सन्देश यही था कि अगर दिल्ली के ग़रीबों के साथ केजरीवाल सरकार के विश्वासघात के विरुद्ध तुमने आवाज़ उठायी तो तुमसे ऐसे ही क्रूरता के साथ निपटा जायेगा। हमारे घाव अभी ताज़ा हैं, हममें से कई की टाँगें सूजी हैं, उँगलियाँ टूटी हैं, सिर फटे हुए हैं और शरीर की हर हरकत में हमें दर्द महसूस होता है। लेकिन, इस अन्याय के विरुद्ध लड़ने और अरविन्द केजरीवाल और उसकी आप पार्टी की घृणित धोखाधड़ी का पर्दाफाश करने का हमारा संकल्प और भी मजबूत हो गया है।

ट्रेडयूनियनों, स्त्री संगठनों और छात्र संगठनों तथा हज़ारों मज़दूरों ने हार मानने से इंकार कर दिया है। उन्होंने घुटने टेकने से इंकार कर दिया है। हालाँकि उनके बहुत से कार्यकर्ता अब भी चोटिल हैं और हममें से कुछ ठीक से चल भी नहीं सकते, फिर भी उन्होंने दिल्ली भर में भण्डाफोड़ अभियान शुरू कर दिये हैं। केजरीवाल सरकार ने दिल्ली की मज़दूर आबादी के साथ घिनौना विश्वासघात किया है जिन्होंने आप पर बहुत अधिक भरोसा किया था। दिल्ली की मेहनतकश आबादी आम आदमी पार्टी की धोखाधड़ी के लिए उसे माफ़ नहीं करेगी। मेरे ख़याल से आम आदमी पार्टी का फ़ासीवाद, कम से कम थोड़े समय के लिए, भाजपा जैसी मुक्त धारा की फ़ासिस्ट पार्टी से भी ज़्यादा ख़तरनाक है, और मैंने 25 मार्च को खुद इसे महसूस किया। और इसका कारण साफ़ है। जिस तरह कम से कम तात्कालिक तौर पर छोटी पूँजी बड़ी पूँजी के मुकाबले अधिक शोषक और उत्पीड़क होती है, उसी तरह छोटी पूँजी का शासन, कम से कम थोड़े समय के लिए बड़ी पूँजी के शासन की तुलना में कहीं अधिक उत्पीड़क होता है और आप की सरकार छोटी पूँजी की दक्षिणपन्थी पापुलिस्ट तानाशाही का प्रतिनिधित्व करती है, और बेशक उसमें अन्धराष्ट्रवादी फ़ासीवाद का पुट भी है। 25 मार्च की घटनाओं ने इस तथ्य को साफ़ ज़ाहिर कर दिया है।

ज़ाहिर है कि केजरीवाल घबड़ाया हुआ है और उसे कुछ सूझ नहीं रहा। और इसीलिए उसकी सरकार इस तरह के क़दम उठा रही है जो उसे और उसकी पार्टी को पूरी तरह नंगा कर रहे हैं। वह जानता है कि दिल्ली की ग़रीब मेहनतकश आबादी से किये गये वादे वह पूरा नहीं कर सकता है, ख़ासकर स्थायी प्रकृति के कामों में ठेका प्रथा ख़त्म करना, क्योंकि अगर उसने ऐसा करने की कोशिश भी कि, तो वह दिल्ली के व्यापारियों, कारख़ाना मालिकों, ठेकेदारों और छोटे बिचौलियों के बीच अपना सामाजिक और आर्थिक आधार खो बैठेगा। आप के एजेण्डा की यही

पेज 10 पर जारी)

घटना के बाद जारी दिल्ली मज़दूर यूनियन की प्रेस विज्ञप्ति

केजरीवाल सरकार को वादों की याद दिलाने दिल्ली सचिवालय पहुँचे ठेका मज़दूरों पर पुलिस का बुरी तरह लाठीचार्ज

पुलिस की पिटाई से घायल मज़दूर कार्यकर्ता आनन्द और शफ़ीक

दिल्ली। 26 मार्च। केजरीवाल सरकार को मज़दूरों से किये वादों की याद दिलाने दिल्ली सचिवालय पहुँचे दिल्ली के सैकड़ों मज़दूरों पर 25 मार्च को दिल्ली पुलिस ने बुरी तरह लाठीचार्ज किया, कई आँसू गैस के गोले छोड़े और दौड़ा-दौड़ाकर मज़दूरों, महिलाओं को पीटा। बहुत से लोगों को काफ़ी चोटें आयी हैं, कइयों के सिर फूट गये हैं। इस जुटान का उद्देश्य मुख्यमन्त्री केजरीवाल को चुनाव के समय किये गये वायदों की याददिहानी कराना था। चुनाव के समय आम आदमी पार्टी ने दिल्ली के साठ लाख ठेका कर्मियों से यह वायदा किया था कि दिल्ली में नियमित प्रकृति के काम से ठेका प्रथा खत्म की जायेगी तथा स्थायी नौकरियाँ दी जायेंगी। सभी ठेका कर्मी यथा, मेट्रो के वर्कर्स, संविदा शिक्षक, दिल्ली सरकार के अस्पतालों के कर्मचारी, सफाई कर्मचारी, असंगठित क्षेत्रों में ठेके पर खटने वाले मज़दूर श्री केजरीवाल से यह माँग करते हुए पहुँचे कि 'दिल्ली राज्य ठेका उन्मूलन विधेयक' पारित करवाया जाये। साथ ही दिल्ली में श्रम क़ानूनों के उल्लंघन पर रोक लगाये जाने और दिल्ली सरकार द्वारा निर्धारित न्यूनतम मज़दूरी का भुगतान सुनिश्चित किये जाने की माँगें भी शामिल थीं।

शांतिपूर्वक अपनी बात को मुख्यमन्त्री तक ले जाने के इरादे से आये दिल्ली भर के मज़दूरों और आम मेहनतकश जनता को वहशी तरीक़े से पीटा गया। पुलिस के पुरुष कर्मियों ने महिलाओं को बुरी तरह पीटा जिसके कारण अनेक महिलाओं को गंभीर चोटें आयी, एक युवा महिला कार्यकर्ता की टांग टूट गयी और बहुत से लोगों के सर फूट गये। इतने पर भी दिल्ली पुलिस को चैन नहीं आया, रैपिड एक्शन फोर्स और दिल्ली पुलिस ने मिलकर मज़दूरों को दौड़ा-दौड़ा कर पीटा, आँसू गैस के गोले बारिश की तरह बरसाए गये। प्रदर्शन में महिलाये व बच्चे भी शामिल थे मगर पुलिस ने उन्हें भी नहीं बक्शा। पुलिस मज़दूरों को दौड़ाकर पीटते हुए राजघाट से किसान घाट की तरफ़ ले गयी। इस बर्बर पुलिस कार्यवाही से साबित हो गया की सरकार किन के हितों की सुरक्षा के लिए हैं। मुख्यमन्त्री केजरीवाल जो खुद को आम आदमी कहते हैं वह क्यों इस बर्बर पुलिसिया दमन पर चुप्पी साधे बैठे हैं। ग़रीब मेहनतकश आबादी अपनी बात लेकर मन्त्री तक पहुँचना चाहती हैं तो उसका यह हश्र किया जाता हैं। प्रदर्शन में शामिल बहुत 16 लोगों को गिरफ्तार किया जिनमें 4 महिलायें शामिल हैं। सभी गिरफ़्तार किये गये लोगों को गम्भीर चोटें आयी थी उसके बावजूद उनका मेडिकल बहुत देर से कराया गया। इन लोगों पर सीआरपीसी के तहत 147, 148, 149, 186, 332, और आईपीसी के तहत 353 और 3 पीडीपी एक्ट की धाराएँ लगी हैं। इनमें मज़दूर बिगुल अखबार के संपादक अभिनव और दिल्ली मेट्रो ठेका कामगार यूनियन की क़ानूनी सलाहकार शिवानी भी शामिल हैं। पुलिस ने मज़दूरों की बर्बर पिटाई को कवर करने के लिए वहाँ मौजूद थोड़े से मीडिया के लोगों और स्वतन्त्र नागरिकों के कैमरे और मोबाइल फोन भी छीनकर तोड़ दिये।

इस पूरी कार्यवाही से आम आदमी पार्टी का असली चेहरा सामने आ गया हैं। यह घटना इस सरकार के लिए बेहद शर्मनाक हैं। और उससे भी ज़्यादा शर्मनाक है प्रशासन का इस पूरे मुद्दे पर मौन होना। जब दिल्ली के व्यापारी वैट माफ़ी के लिए दिल्ली सचिवालय पहुँचते हैं तो सभी मन्त्री उनके सामने हाजिर हो जाते हैं और जब दिल्ली का मज़दूर अपनी बात लेकर जाता हैं तो उन पर लाठियाँ बरसाई जाती हैं।

– सनी सिंह
दिल्ली मज़दूर यूनियन

25 मार्च की घटना पर देश के विभिन्न हिस्सों में आम आदमी पार्टी के विरोध में प्रदर्शन

दिल्ली में पुलिस मुख्यालय के सामने और लखनऊ में जीपीओ पार्क में विभिन्न संगठनों का प्रदर्शन

लाठीचार्ज के विरोध में मज़दूरों ने वज़ीरपुर में स्थानीय विधायक के दफ़्तर का घेराव किया और 'आप' का पुतला फूँका

25 मार्च की घटना के विरोध दिल्ली, पटना, मुम्बई और लखनऊ में विरोध प्रदर्शन हुए। 1 अप्रैल को दिल्ली के वज़ीरपुर औद्योगिक क्षेत्र के मज़दूरों ने 'दिल्ली इस्पात उद्योग मज़दूर यूनियन' के नेतृत्व में सैंकड़ों की संख्या में मज़दूरों ने रैली निकाली और इलाके के आप विधायक राजेश गुप्ता का घेराव किया। राजेश गुप्ता मज़दूरों की रैली के पहुँचने के पहले ही पलायन कर गये। इसके बाद मज़दूरों ने उनके कार्यालय के बाहर पुतला दहन किया और फिर वज़ीरपुर औद्योगिक क्षेत्र में आम आदमी पार्टी के पूर्ण बहिष्कार का एलान किया।

इसी प्रकार 28 मार्च दिल्ली पुलिस मुख्यालय पर दिल्ली के जनवादी अधिकार संगठनों जैसे कि पीयूडीआर, पीयूसीएल, जागरूक नागरिक मंच आदि ने मिलकर प्रदर्शन किया और अपना विरोध पत्र व ज्ञापन पुलिस आयुक्त को सौंपा। लखनऊ में भी 28 मार्च के दिन कई जनसंगठनों ने मिलकर जीपीओ पर प्रदर्शन किया और केजरीवाल सरकार की निन्दा की। पटना में 5 अप्रैल को नौजवान भारत सभा और दिशा छात्र संगठन ने केजरीवाल का पुतला दहन किया और 25 मार्च की घटना के लिए लिखित माफ़ी की माँग की। मुम्बई में भी इसी दिन दादर स्टेशन के बाहर यूनीवर्सिटी कम्युनिटी फॉर डेमोक्रेसी एण्ड इक्वॉलिटी व नौजवान भारत सभा ने मिलकर प्रदर्शन किया और केजरीवाल सरकार के प्रति भर्त्सना प्रस्ताव पास किया। सूरतगढ़ में भी नौजवान भारत सभा के नेतृत्व में लोगों ने केजरीवाल सरकार का पुतला फूँका और विरोध प्रदर्शन किया।

12 अप्रैल को खजूरी में केजरीवाल ने अपनी एक सभा रखी जिसके विरुद्ध खजूरी इलाके की जनता ने उसे काले झण्डे दिखाये और उसका पुतला दहन किया। केजरीवाल ने एक बार फिर पुलिस को आगे करके इस विरोध प्रदर्शन को कुचलने का प्रयास किया लेकिन वह इस बार भी असफल रहा। केजरीवाल की सभा बुरी तरह असफल रही जिसमें आम आदमी पार्टी के 200-250 कार्यकर्ताओं (जो कि बाहर से ट्रकों से भरकर लाये गये थे) के अलावा मुश्किल से कुछ दर्जन लोगों ने शिरकत की। यही कारण था कि सभा को बेहद जल्दी खत्म कर केजरीवाल अपने 40 विधायकों और मन्त्रियों को लेकर चलता बना।

दिल्ली के वज़ीरपुर औद्योगिक क्षेत्र में मज़दूरों ने एकत्र होकर एक बार फिर से 15 अप्रैल को आम आदमी पार्टी राजेश गुप्ता का घेराव किया और माँग की कि दिल्ली सरकार ने जो न्यूनतम मज़दूरी में बढ़ोत्तरी करवायी है (जो हर वर्ष दिल्ली राज्य में दो बार नियमत: होती है) उसे वज़ीरपुर औद्योगिक क्षेत्र में तत्काल प्रभाव से लागू करवाया जाय। जवाब में राजेश गुप्ता पीछे के दरवाज़े से भाग खड़ा हुआ। बाद में पता चला कि वज़ीरपुर औद्योगिक क्षेत्र में स्वयं राजेश गुप्ता और उसके रिश्तेदारों के कारखाने हैं। मज़दूरों ने अभी भी 'आम आदमी पार्टी' का वज़ीरपुर में बहिष्कार जारी रखा है।

(ऊपर और ऊपर दायें) दिल्ली के खजूरी में 12 अप्रैल को केजरीवाल की सभा के बाहर इलाक़े के नागरिकों और नौभास का विरोध प्रदर्शन

मुम्बई (बायें) में विभिन्न संगठनों ने दादर स्टेशन के बाहर प्रदर्शन किया जबकि पटना (ऊपर) में नौभास के कार्यकर्ताओं ने प्रदर्शन करके केजरीवाल सरकार का पुतला फूँका

मज़दूर वर्ग का नया शत्रु और पूँजीवाद का नया दलाल–अरविन्द केजरीवाल

(पेज 1 से आगे)

जिनकी साल की आमदनी रुपये 10 करोड़ से ज़्यादा है। इस ऑडिट रिपोर्ट का मक़सद होता है कर चोरी के लिए व्यापारियों द्वारा किये जाने वाले हेर-फेर पर रोक लगाना। अब दिल्ली के बड़े दुकानदार खुलकर इस हेरफेर को अंजाम देंगे। यानी कि व्यापारिक पूँजीपति वर्ग द्वारा किये जाने वाले भ्रष्टाचार से केजरीवाल को कोई दिक्कत नहीं है! हो भी कैसे! केजरीवाल ने खुद ही कहा था, 'ओ जी मैं तो बनिया हूँ! मेरी तो रग-रग में धन्धा दौड़ रहा है!' इसके अलावा वैट के सरलीकरण का फ़ायदा अब दिल्ली के हर उस व्यापारी को होगा जो कि साल भर में 1 करोड़ रुपये कमाता है।

3. 'ईमानदार' केजरीवाल द्वारा व्यापारियों को भ्रष्टाचार और बेईमानी करने की पूरी आज़ादी

अरविन्द केजरीवाल ने कर चोरी करने वाले दुकानदारों, व्यापारियों और कारखाना-मालिकों पर सरकारी छापों पर रोक लगा दी है! यानी कि अब दिल्ली के कारखाना मालिक, दुकानदार और बड़े व्यापारी जी भर के कर-चोरी और भ्रष्टाचार कर सकते हैं! उन पर किसी भी प्रकार के छापे, रोक-टोक या सज़ा का ख़तरा नहीं होगा। सबसे मज़ेदार बात यह है कि केजरीवाल इसे अपनी एक उपलब्धि के रूप में ऐसे प्रचारित करता है मानो उसने कोई बहुत बड़ा सदाचार का काम किया हो! इससे एक बार फिर साफ़ हो गया कि केजरीवाल हर प्रकार के भ्रष्टाचार के ख़िलाफ़ नहीं है। वह केवल एक प्रकार के भ्रष्टाचार के ख़िलाफ है, यानी कि नेताओं और अफसरों द्वारा किया जाने वाला भ्रष्टाचार! अगर यह भ्रष्टाचार ख़त्म भी हो जाये (जो कि पूँजीवादी व्यवस्था के रहते असम्भव है) तो भी इससे आम मेहनतक़श जनता को बहुत फ़ायदा नहीं होने वाला है। इस भ्रष्टाचार में केजरीवाल के निशाने पर केवल वह भ्रष्टाचार है जिसके चलते दिल्ली के पूँजीपतियों, दुकानदारों, ठेकेदारों और व्यापारियों को अपने मुनाफ़े का एक हिस्सा दिल्ली प्रशासन के अफसरों आदि को देना पड़ता है। यानी कि केजरीवाल केवल उस भ्रष्टाचार को ख़त्म करना चाहता है जिसका मक़सद है मज़दूरों और आम मेहनतक़श आबादी की मेहनत का शोषण करके लूटे गये मुनाफ़े में नेताशाही-नौकरशाही के उस हिस्से को कम करना जो कि उसे भ्रष्टाचार के ज़रिये प्राप्त होता है, जैसे कि तरह-तरह के लाइसेंस देने, इंस्पेक्शन आदि के काम में पूँजीपतियों, दुकानदारों आदि से वसूली जाने वाली रिश्वत। वास्तव में, ये नौकरशाह यह रिश्वत तभी माँग सकते हैं, जब कारखाना-मालिक, दुकानदार वग़ैरह किसी न किसी क़िस्म का भ्रष्टाचार करते हैं। केजरीवाल ने मालिक पूँजीपतियों, ठेकेदार पूँजीपतियों और दुकानदार पूँजीपतियों के भ्रष्टाचार को खुली छूट दे दी है और उनका "उत्पीड़न" करने वाले अफसरी भ्रष्टाचार पर रोक लगा दी है! यही कारण है कि केजरीवाल और उसकी पार्टी को दिल्ली के दुकानदारों, कारखाना मालिकों, उच्च मध्यवर्ग आदि ने जमकर चन्दा दिया, जिसके बूते पूरे शहर में केजरीवाल ने अपने झूठे वायदों से भरे पोस्टर और होर्डिंग टँगवा दिये।

4. केजरीवाल के राज में सिर्फ़ टुटपुँजिये मालिकों, ठेकेदारों और दलालों की ही नहीं, बड़े पूँजीपतियों की भी 'बल्ले-बल्ले'

अरविन्द केजरीवाल ने दो महीने के अपने शासन में ही इस बात के संकेत दे दिये हैं कि उनकी सरकार केवल छोटे पूँजीपतियों, दुकानदारों और ठेकेदारों की सेवा नहीं करेगी, बल्कि बड़ी पूँजी की भी तबीयत से सेवा करेगी। हाल ही में सीआईआई के दिल्ली में हुए एक स्थानीय सम्मेलन में केजरीवाल ने उद्योगपतियों को भरोसा दिलाया कि उसकी सरकार दिल्ली में जमकर निजीकरण करेगी। केजरीवाल ने कहा कि दिल्ली में बसें चलाना सरकार का काम नहीं है और इस क्षेत्र का जल्द ही निजीकरण किया जायेगा, जिससे कि बसों के अभाव की समस्या दूर हो सके। यानी कि दिल्ली परिवहन निगम के निजीकरण का रास्ता केजरीवाल ने खोलने के स्पष्ट संकेत दे दिये हैं। हम सभी जानते हैं कि अगर सार्वजनिक परिवहन व्यवस्था का निजीकरण होता है तो दिल्ली की बसों में किराया इस कदर बढ़ेगा कि उसमें आम ग़रीब आदमी का चलना मुश्किल हो जायेगा। दिल्ली की एक अच्छी-ख़ासी मेहनतक़श आबादी है जो कि रोज़ काम पर जाने के लिए दिल्ली मेट्रो रेल का इस्तेमाल नहीं कर सकती क्योंकि वह उसे काफ़ी महँगी पड़ती है। वह पूरी तरह से दिल्ली परिवहन निगम की बसों पर निर्भर है। सभी जानते हैं कि अगर निजी क्षेत्र की कम्पनियाँ दिल्ली परिवहन निगम को हाथ में लेती हैं तो उनका मक़सद जनता की ज़रूरतों को पूरा करना या उनकी सेवा करना नहीं, बल्कि मुनाफ़ा कमाना होगा। ऐसे में, वह बसों के किराये को अधिकतम सम्भव बढ़ाएँगी, अपनी लागत को घटाने के लिए दिल्ली परिवहन निगम के कर्मचारियों में अधिकांश को ठेके पर रखने का और छँटनी करने का प्रयास करेंगी और हर प्रकार के सुरक्षा मानकों के साथ समझौते करेंगी। ऐसे में, दिल्ली परिवहन निगम की सेवाएँ न सिर्फ़ उपभोक्ताओं के लिए ज़्यादा महँगी हो जाएँगी बल्कि दिल्ली परिवहन निगम की बसें चलाने वाली हज़ारों मेहनतक़शों की आबादी का ठेकाकरण किया जायेगा और उन्हें आर्थिक और सामाजिक असुरक्षा व अनिश्चितता के गड्ढे में धकेल दिया जायेगा। ज़ाहिर है कि इससे टाटा, अम्बानी, बिड़ला आदि जैसे बड़े पूँजीपतियों को काफ़ी फ़ायदा पहुँचेगा। ठीक उसी प्रकार जैसे कि दिल्ली विद्युत बोर्ड के निजीकरण से टाटा और अम्बानी को फ़ायदा पहुँचा है।

5. पूँजीवाद का नया दलाल–केजरीवाल, केजरीवाल!

इसी तरह केजरीवाल सरकार ने आते ही पूँजीपतियों, ठेकेदारों और दुकानदारों के लिए अपने पलक-पाँवड़े बिछा दिये हैं। सही मायने में देखें तो थोड़े समय में केजरीवाल सरकार कांग्रेस या भाजपा से भी ज़्यादा नंगई से पूँजी की सेवा करेगी और वह भी 'आम आदमी-आम आदमी' का गाना गाकर! मेहनतकश जनता को लगातार बाज़ार की अन्धी ताक़तों के भरोसे छोड़ दिया जायेगा और सरकार पूँजीपतियों की मैनेजिंग कमेटी का काम ज़्यादा खुले तौर पर करेगी। यह बात दीगर है कि 'आम आदमी पार्टी' और केजरीवाल जैसे भाँडों की राजनीति बहुत दिनों तक नहीं चल पाती है और एक उल्का पिण्ड की तरह उभरने के बाद वह उतनी ही तेज़ी से चारों खाने चित भी हो जाती है। लेकिन तात्कालिक तौर पर पूँजीपति वर्ग की दो सेवा वह कर जाती है: एक, अन्य नंगी हो चुकी पार्टियों से जनता ऊबी होती है और जनता उन्हें शासन के लिए सहमति नहीं दे रही होती है, ऐसे में, 'सदाचार, ईमानदारी, पारदर्शिता' आदि का ढोल बजाते हुए इस प्रकार की पार्टियाँ आती हैं और पूँजीवादी व्यवस्था को ही पूर्णत: नंगा हो जाने से कम-से-कम कुछ समय के लिए बचा लेती हैं; इतने समय में, लोग कांग्रेस और भाजपा जैसी पुरानी पार्टियों के पापों को कुछ भूल चुके होते हैं और उन्हें माफ़ी देने का मन बना लेते हैं। इस प्रकार पूँजीवादी व्यवस्था की वैधता लोगों की निगाह में कहीं न कहीं बनी रह जाती है। दूसरे शब्दों में कहें तो लोगों की इस अमानवीय, मुनाफ़ा-केन्द्रित व्यवस्था को बर्दाश्त करने की इच्छा और शक्ति बची रह जाती है। दूसरी सेवा 'आप' जैसी पार्टियाँ बिखरने या हाशिये पर जाने से पहले यह करती हैं कि वह आम आदमी की बात करते हुए तेज़ी से उदारीकरण और निजीकरण के वह कार्य कर जाती हैं जो कि भाजपा या कांग्रेस विश्वसनीयता के संकट के कारण और बड़ी पूँजी के खुले दलालों के तौर पर बेनक़ाब हो जाने के कारण उतनी सुगमता से करने की स्थिति में नहीं रहती है। मिसाल के तौर पर, अगर डी.टी.सी. के निजीकरण पर इस समय कांग्रेस या भाजपा के किसी मुख्यमन्त्री ने बयान दिया होता तो काफ़ी हल्ला मचा होता। लेकिन केजरीवाल इस तरह का बेशर्म बयान देने के बावजूद साफ़-साफ़ बच निकला क्योंकि अभी उसकी राजनीति सन्तृप्ति की मंज़िल तक नहीं पहुँची है और जनता का एक हिस्सा अभी भी उस पर कुछ यक़ीन करने या कुछ इन्तज़ार करने का हामी है। हालाँकि, यह हिस्सा हर बीतते दिन के साथ ज़्यादा कम होता जा रहा है क्योंकि केजरीवाल 'सदाचार, ईमानदारी, पारदर्शिता, परमार्थवाद' के जिन दावों के साथ लोगों को मूर्ख बनाते हुए सत्ता में आया था, वे दावे अब जनता में मज़ाक का विषय बनते जा रहे हैं। इसका एक कारण यह भी है कि केजरीवाल का अपना व्यक्तिगत तानाशाहाना रवैया, सत्ता के प्रति उसकी नंगी भूख उसकी पार्टी के भीतर मचे हंगामे से भी काफ़ी हद तक बेनक़ाब हो गयी है। अब केजरीवाल में जनता को वह मिस्टर सुथरा नज़र नहीं आ रहा है, जिससे उसे काफ़ी उम्मीदें थीं। वे उच्च अपेक्षाएँ धराशायी हो चुकी हैं। लेकिन कई लोग अभी थोड़ा इन्तज़ार करने के मूड में हैं क्योंकि केजरीवाल का रिपोर्ट कार्ड वह भाजपा और कांग्रेस की तुलना में देख रहे हैं। जल्द ही ये बची-खुची अपेक्षाएँ और इन्तज़ार करने का मूड भी ख़त्म हो जायेगा। ऐसे में कोई ताज्जुब की बात नहीं होगी अगर केजरीवाल सरकार के नेताओं और मन्त्रियों को जनता एक बार फिर से थप्पड़ मारने, मुँह काला करने और जूते मारने का काम करे। ऐसे में, केजरीवाल सरकार भी लगातार ज़्यादा से ज़्यादा तानाशाहाना रवैया अपनायेगी। ज़्यादा सम्भावना यही है कि दिल्ली में पाँच साल की सरकार के बाद केजरीवाल और 'आम आदमी पार्टी' का राजनीतिक कैरियर ही समाप्त हो जाये, वह विसर्जित हो जाये या फिर कोई हाशिये की पार्टी बन कर रह जाये। अब देखते हैं कि केजरीवाल सरकार ने बीते दो महीनों में दिल्ली के मेहनतक़शों के लिए क्या किया है।

केजरीवाल सरकार ने पिछले दो महीने में मज़दूरों और आम मेहनतक़श आबादी के लिए क्या किया?

केजरीवाल सरकार ने दिल्ली के मज़दूरों और आम मेहनतक़श आबादी को दो महीने में ही बता दिया कि उनको जल्द से जल्द वे वायदे भूल जाने चाहिए जो कि केजरीवाल सरकार ने चुनाव से पहले किये थे। केजरीवाल सरकार ने जो दूसरा काम किया है, वह है मेहनतक़श जनता को कुछ लॉलीपॉप थमाने का। आइये देखें कि केजरीवाल ने जनता के साथ किस प्रकार धोखा किया है।

1. ठेका मज़दूरों के साथ केजरीवाल सरकार का धोखा

चुनाव के पहले केजरीवाल ने अपने प्रचार में कहा था कि दिल्ली राज्य में नियमित कार्य करने वाले ठेका कर्मचारियों को स्थायी नौकरी दी जायेगी। चुनाव के बाद पहले तो केजरीवाल सरकार ने निजी क्षेत्र में नियमित काम करने वाले सभी ठेका मज़दूरों को स्थायी करने की बात बोलना ही छोड़ दिया। पिछले दो महीनों में केजरीवाल सरकार के किसी भी मन्त्री ने दिल्ली के कारखानों, होटलों, दुकानों आदि में नियमित काम करने वाले क़रीब 55 लाख से भी ज़्यादा ठेका मज़दूरों को नियमित/स्थायी करने की बात नहीं की है। सरकारी विभागों के ठेकाकर्मियों को भी स्थायी करने के लिए केजरीवाल सरकार ने कोई कदम नहीं उठाया है जिसमें 2 से 3 लाख ठेकाकर्मी काम कर रहे हैं। इनमें से अच्छा-ख़ासा हिस्सा सफ़ाईकर्मियों का है जो कि पहले से माँग करते आये हैं कि उन्हें पक्की नौकरी दी जाये। इन सरकारी विभागों के ठेकाकर्मियों के लिए केजरीवाल सरकार ने एक दिखावटी अन्तरिम आदेश जारी किया जिसमें यह निर्देश किया गया था कि 'अगले आदेश तक सरकारी विभाग के किसी ठेकाकर्मी को काम से निकाला नहीं जायेगा।' इसका क्या अर्थ है? सरकारी विभागों में नियमित काम करने वाले सभी कर्मचारियों को एक सप्ताह के भीतर स्थायी रोज़गार दिया जा सकता है, लेकिन यह करने की बजाय केजरीवाल सरकार ने एक अन्तरिम आदेश दिया जिसके अन्तर्गत उन्हें फिलहाल नहीं निकाला जायेगा। मज़दूरों को अभी भी वेतन के सरकारी मानकों के अनुसार वेतन नहीं मिलेगा, उन्हें स्थायी मज़दूरों वाली अन्य सुविधाएँ नहीं मिलेंगी; उन्हें बस अभी न निकाले जाने का आश्वासन दिया गया और यह आश्वासन भी झूठा साबित हुआ क्योंकि इस अन्तरिम आदेश के कुछ ही दिनों बाद ठेके पर काम करने वाले क़रीब पाँच सौ होमगार्डों को दिल्ली सरकार ने नौकरी से निकाल दिया। यानी कि इस अन्तरिम आदेश का भी कोई मूल्य नहीं है क्योंकि दिल्ली सरकार इसे भी लागू नहीं करेगी! यानी कि निजी क्षेत्र के ठेका मज़दूरों के बारे में तो केजरीवाल सरकार ने साज़िशाना चुप्पी साध ली है और उसके बारे में एक शब्द भी नहीं बोल रही है और सरकारी क्षेत्र के ठेका कर्मचारियों को अन्तरिम आदेश के तौर पर एक झूठे आश्वासन का लॉलीपॉप दे दिया है, जिसको स्वयं दिल्ली सरकार लागू नहीं कर रही है।

ठेका मज़दूरों ने भी केजरीवाल सरकार के वायदे को भूल जाने से इंकार कर दिया है। 25 मार्च को विशेष तौर पर हज़ारों ठेका मज़दूर और साथ ही झुग्गीवासी दिल्ली सचिवालय के बाहर 'वादा न तोड़ो अभियान' के तहत केजरीवाल सरकार को वायदों की याददिहानी के लिए एकत्र हुए। 2 फरवरी को जब कुछ दर्जन व्यापारी केजरीवाल से मिलने

(पेज 12 पर जारी)

मज़दूर वर्ग का नया शत्रु और पूँजीवाद का नया दलाल–अरविन्द केजरीवाल

पेज 11 से आगे)

दिल्ली सचिवालय गये थे, तब केजरीवाल और उसके मन्त्री अद्भुत गति से पूँछ हिलाते हुए उनसे मिलने आये थे, लेकिन 25 मार्च को जब हज़ारों ठेका मज़दूर वायदों की याददिहानी के लिए दिल्ली सचिवालय गये तो खुद केजरीवाल के कार्यालय से दिल्ली पुलिस को मज़दूरों पर लाठी चार्ज करने का निर्देश आया। नतीजतन, 25 मार्च को पुलिस ने बर्बरतापूर्वक मज़दूरों और औरतों पर लाठी चार्ज किया और उनका माँगपत्रक तक स्वीकार नहीं किया। केजरीवाल सरकार ने इस घटना के बाद यह धुंध फैलाने का प्रयास किया कि दिल्ली पुलिस मुख्यमन्त्री के अन्तर्गत नहीं बल्कि केन्द्र सरकार के अन्तर्गत है। लेकिन यह भी सच है कि दिल्ली की रोज़मर्रा की क़ानून- व्यवस्था के लिए मुख्यमन्त्री दिल्ली पुलिस को निर्देश देने की शक्ति रखता है और दिल्ली पुलिस तब तक उस निर्देश का पालन करने को बाध्य होती है, जब तक कि वह केन्द्रीय गृहमन्त्री के किसी निर्देश के विरोध में न हो। 25 मार्च की पूरी घटना की विस्तृत रिपोर्ट इस अंक में मौजूद है जिसे आप अवश्य पढ़ें, लेकिन 25 मार्च की घटना से एक बात साफ़ हो गयी है: केजरीवाल का मज़दूरों को यह सन्देश है कि 'तुमसे हमें वोट चाहिए थे, सो हमें मिल गये। अब अगर तुम वायदों को याद दिलाओगे तो हम तुम पर लाठियाँ बरसायेंगे।' केजरीवाल सरकार को यह मुग़ालता है कि उसके इस कदम से दिल्ली के मेहनतक़श-मज़दूर डर जायेंगे और वायदों को पूरा करवाने की ज़िद छोड़ देंगे। लेकिन यह बहुत बड़ी ग़लतफ़हमी है क्योंकि 25 मार्च के दमन की घटना के ठीक बाद वज़ीरपुर औद्योगिक क्षेत्र के हज़ारों मज़दूरों ने वहाँ के आम आदमी पार्टी विधायक राजेश गुप्ता का घेराव किया, केजरीवाल का पुतला फूँका और वज़ीरपुर औद्योगिक क्षेत्र में तब तक 'आम आदमी पार्टी' का हर रूप में और आने वाले निगम चुनावों में बहिष्कार का ऐलान किया है। इसके कुछ ही दिनों बाद दिल्ली के खजूरी इलाक़े में केजरीवाल अपने पूरे मन्त्रिमण्डल और 40 विधायकों के साथ सभा करने आया तो इलाक़े के नौजवानों, मज़दूरों और औरतों ने सैकड़ों की संख्या में उसे काले झण्डे दिखाये और उसका पुतला दहन किया, हालाँकि केजरीवाल ने उन्हें गिरफ़्तार करवाकर विरोध प्रदर्शन करने से रोकने की पूरी कोशिश की। केजरीवाल की सभा बुरी तरह असफल रही और उसमें बाहर से ट्रकों में भरकर लाये गये 500 लोगों के अलावा इलाक़े के मुश्किल से कुछ दर्जन लोगों ने शिरक़त की। नतीजतन, केजरीवाल 40 से 45 मिनट में ही इस बेइज़्ज़ती से बचने के लिए सभा से अपने मन्त्रियों और विधायकों को लेकर भाग खड़ा हुआ। दिल्ली के अन्य इलाक़ों में भी 25 मार्च की घटना को लेकर रोष व्याप्त है और मज़दूरों के अच्छे-ख़ासे हिस्से में 'आम आदमी पार्टी' का आधार ख़ासा कमज़ोर हुआ है। केजरीवाल सरकार के विरोध में सैकड़ों ठेका शिक्षक कई दिनों से दिल्ली सचिवालय के बाहर बैठे हुए हैं लेकिन केजरीवाल सरकार उनकी कोई सुध नहीं ले रही है। इन सभी घटनाओं ने केजरीवाल और उसके ईमानदारी के ढोल की हवा निकालनी शुरू कर दी है।

2. झुग्गीवासियों के साथ केजरीवाल सरकार का धोखा

केजरीवाल ने चुनावों से पहले कहा था कि 5 वर्षों के भीतर चरणबद्ध तरीके से दिल्ली के अलग-अलग क्षेत्र के झुग्गी-निवासियों को पक्के मकान दिये जायेंगे। ये पक्के मकान भरसक झुग्गी के स्थान पर ही दिये जायेंगे और अगर सम्भव नहीं होगा तो उसके निकट ही दिये जायेंगे। जब केजरीवाल से पूछा गया कि दिल्ली सरकार इसके लिए आवश्यक बजट कहाँ से लायेगी और क्या इसके लिए वह केन्द्र सरकार से अनुदान पर निर्भर नहीं है? तो केजरीवाल सरकार ने कहा कि दिल्ली के व्यापारी और कारखानेदार इसके लिए मदद करेंगे और दिल्ली में अगर भ्रष्टाचार से इन्हें मुक्ति दे दी जाय, तो जो पैसे ये रिश्वत या घूस में देते थे, वह पैसे ये दिल्ली सरकार को देंगे और इससे दिल्ली सरकार को कुछ हज़ार करोड़ रुपयों की आमदनी होगी। इसके आधार पर केजरीवाल ने यह दावा किया था कि दिल्ली सरकार के पास फण्ड की कोई कमी नहीं है और पाँच वर्षों के दौरान ये चरणबद्ध तरीक़े से झुग्गीवासियों को पक्के मकान दे देगी। ज़रा ग़ौर कीजिये कि 12 अप्रैल को केजरीवाल सरकार ने क्या कहा।

12 अप्रैल को केजरीवाल ने खजूरी की आम सभा में कहा कि उसकी सरकार झुग्गियों की जगह पक्के मकान नहीं दे सकती, अगर मोदी की केन्द्र सरकार उसे 10 हज़ार करोड़ रुपये नहीं देती क्योंकि दिल्ली सरकार के पास इतने पैसे नहीं हैं कि वह झुग्गीवासियों को पक्के मकान दे सके! केजरीवाल ने चुनाव के पहले कही अपनी बात पर एकदम बेशर्मी से 'यू-टर्न' मार दिया! यानी कि अब झुग्गीवासियों को केजरीवाल सरकार पक्के मकान देने के मामले में हाथ खड़े कर चुकी है और यह शर्त रख रही है कि मोदी सरकार उसे 10 हज़ार करोड़ रुपये देगी तभी वह पक्के मकान देगी! क्या केजरीवाल को यह बात चुनावों के पहले पता नहीं थी? अगर पता थी तो उसने झूठा वायदा क्यों किया? क्योंकि अब मोदी सरकार तो 10 हज़ार करोड़ रुपये देने से रही क्योंकि वह खुद ही बजट घाटे का रोना रो रही है और तमाम सरकारी सेक्टरों के निजीकरण के लिए भूमिका तैयार कर रही है। यानी कि न तो मोदी सरकार पैसा देगी और केजरीवाल सरकार भी, जो कि व्यापारियों को छूट-छूट दे-देकर पहले ही दिल्ली सरकार के ख़ज़ाने को खाली कर चुकी है, झुग्गीवासियों को पक्के मकान नहीं देगी! यानी कि झुग्गीवासियों के साथ, जिन्होंने आख़िरी चुनावों में मिलकर भारी पैमाने पर केजरीवाल को वोट दिया, एक भयंकर धोखा किया जा चुका है।

12 अप्रैल को ही केजरीवाल ने एक और बात कही। उसने कहा कि पक्के मकानों के लिए (जो कि अब वैसे ही नहीं मिलने वाले हैं!) लोग नयी झुग्गियाँ न बनाएँ! यानी कि अब दिल्ली के ग़रीब मेहनतक़श अगर कहीं मेहनत-मशक्कत करते हैं, कारखानों में अपना हाड़ गलाते हैं, तो वह दिल्ली में अपनी झुग्गी भी नहीं डाल सकते। अगर वे डालेंगे तो केजरीवाल सरकार ने उन पर कार्रवाई का संकेत दे दिया है। यानी कि न तो मज़दूरों की मेहनत निचोड़कर मुनाफ़ा पीटने वाले पूँजीपति मज़दूरों की रिहायश की ज़िम्मेदारी लेंगे और न ही सरकार; और अगर मज़दूर स्वयं कहीं ख़ाली ज़मीन पर अपने काम की जगह के नज़दीक कोई झुग्गी बसाते हैं, तो केजरीवाल सरकार उन्हें ऐसा भी नहीं करने देगी। यानी कि अब मज़दूरों को दिल्ली के बाहर या फिर ग्रामीण दिल्ली के किनारे के इलाक़ों में जाकर रहने की व्यवस्था करनी होगी और लम्बी दूरियाँ तय करके काम पर आना होगा। आने वाले कुछ वर्षों में केजरीवाल सरकार का यह रवैया और खुलकर सामने आ जायेगा। अभी तो सिर्फ़ एक बयान आया है।

केजरीवाल सरकार ने सत्ता में आते ही कहा था कि दिल्ली में कहीं भी झुग्गियाँ तब तक तोड़ी नहीं जायेंगी जब तक कि सरकार उसके स्थान पर पक्के मकान की व्यवस्था न करे। लेकिन यह आदेश भी झूठा निकला क्योंकि इस आदेश के कुछ ही दिनों के बाद आज़ादपुर के जेलरबाग, बादली, बवाना से लेकर तमाम जगहों पर झुग्गियाँ तोड़ी गयीं। 25 मार्च को इन टूटी झुग्गियों के निवासी भी केजरीवाल सरकार के सामने अपनी माँगें लेकर गये थे, जिन पर केजरीवाल ने लाठियाँ बरसवायीं। नतीजतन, यह भी साफ़ हो गया कि झुग्गियों को न टूटने देने के मामले में भी केजरीवाल ने झुग्गीवासियों से झूठ बोला है और उन्हें धोखा दिया है।

3. दिल्ली की आम बेरोज़गार आबादी से केजरीवाल सरकार का विश्वासघात

केजरीवाल की 'आम आदमी पार्टी' ने चुनाव के पहले जारी किये गये अपने '70-प्वाइण्ट एक्शन प्लान' में कहा था कि दिल्ली सरकार में 55 हज़ार पद ख़ाली पड़े हैं जिनपर सत्ता में आने पर तत्काल नियुक्ति आरम्भ करवायी जायेंगी और इन पदों पर स्थायी कर्मचारी के तौर पर नियुक्तियाँ होंगी। साथ ही, यह भी कहा गया था कि सभी ठेका शिक्षकों को स्थायी करने के साथ 17 हज़ार नये शिक्षकों की स्थायी कर्मचारी के तौर पर भर्ती की जायेगी। इसके अलावा, दिल्ली में 5 वर्षों में 8 लाख नये रोज़गार पैदा करने का वायदा भी केजरीवाल सरकार ने किया था। दिल्ली के लाखों के निम्न मध्यवर्गीय और ग़रीब बेरोज़गारों ने इन्हीं वायदों के आधार पर केजरीवाल को वोट दिया था। लेकिन केजरीवाल सरकार ने पिछले दो महीनों में इन वायदों पर एक शब्द भी नहीं बोला है। कारण यह है कि दिल्ली का और देश का पूँजीपति वर्ग नहीं चाहता है कि सरकारी क्षेत्रों में नयी नौकरियाँ पैदा की जायें; वह तो चाहता है कि तमाम सरकारी क्षेत्रों का भी निजीकरण करके उसे सौंप दिया जाये। और दिल्ली के दुकानदारों-व्यापारियों का सच्चा नुमाइन्दा केजरीवाल उनकी इच्छा की अनदेखी तो कर नहीं सकता है! ऐसे में, इन वायदों के बारे में भी आम आदमी पार्टी सरकार ने एक साज़िशाना चुप्पी साध ली है। केजरीवाल सरकार ने पिछले दो महीने में जो बयान दिये हैं उसमें से 90 प्रतिशत पूँजीपतियों और व्यापारियों की माँगों को पूरा करने को लेकर दिये हैं। 25 मार्च को 'वादा न तोड़ो अभियान' के तहत दिल्ली के आम मेहनतक़शों ने 'दिल्ली राज्य शहरी रोज़गार गारण्टी विधेयक' पारित करने की माँग भी केजरीवाल सरकार के सामने रखी थी, जिसे सुनने से केजरीवाल सरकार ने इंकार कर दिया था। स्पष्ट है कि यदि 5 वर्षों में सरकार को 8 लाख रोज़गार पैदा करने हैं तो दो कार्य करने ही होंगे: पहला, दिल्ली में ग़रीबों के लिए ज़रूरी विकास कार्य की एक स्पष्ट योजना, जो कि केजरीवाल सरकार अभी तक नहीं बना पायी है; और दूसरा, जो कि सबसे ज़रूरी है, एक शहरी रोज़गार गारण्टी विधेयक को पारित करना जिसके तहत इन तमाम विकास कार्यों में दिल्ली की विशाल बेरोज़गार आबादी को गारण्टी के साथ पक्का काम मिल सके। लेकिन केजरीवाल सरकार ऐसे विधेयक की जगह 'कुशलता-विकास' का नारा दे रही है। इसका क्या अर्थ है? वही जो कि राजीव गाँधी स्वरोज़गार योजना का था! यानी कि दिल्ली के ग़रीबों को पंचर साटना, बढ़ई का काम, प्लम्बर का काम सिखाया जायेगा और फिर उनसे कहा जायेगा कि 'अब जाओ! अपना धन्धा शुरू कर लो! इसके लिए बैंक से सूक्ष्म ऋण ले लो!' जैसा कि केजरीवाल का सपना है: दिल्ली में हर कोई धन्धे वाला और पूँजीपति हो जायेगा! ज़ाहिर है यह जनता को मूर्ख बनाने का एक तरीका है। ज़रा सोचिये! अगर हर कोई पूँजीपति या धन्धेबाज़ हो जायेगा तो फिर मज़दूरी कौन करेगा? वास्तव में, केजरीवाल सरकार को 55 हज़ार भर्तियाँ, 18 हज़ार नये शिक्षकों की भर्तियाँ, नये सफाई कर्मचारियों की भर्तियाँ और 5 साल में 8 लाख नये रोज़गार पैदा करने के वायदे को पूरा नहीं करना है और अब इसके लिए वह तरह-तरह से लच्छेदार बातें करके जनता को भरमाना चाहता है। ज़ाहिर है, ऐसे मंसूबे कामयाब नहीं हो पाते हैं।

4. बिजली और पानी के प्रश्न पर केजरीवाल सरकार द्वारा वायदे पूरा करने की असलियत

केजरीवाल सरकार ने अपनी डूबती नैया को बचाने के लिए दिल्ली भर में पोस्टर और होर्डिंग लगवा दिये हैं कि उसने बिजली के बिल आधे करने और 20 हज़ार लीटर तक पानी को निशुल्क करने का वायदा पूरा कर दिया है! आइये ज़रा इस दावे की असलियत की पड़ताल करें।

जहाँ तक बिजली के बिलों को आधा करने का प्रश्न है वहाँ तीन बातें ग़ौर करने वाली हैं। पहली बात यह कि अरविन्द केजरीवाल बिजली के बिल आधे करने के लिए निजी वितरण कम्पनियों के मुनाफ़े में किसी कमी की बात नहीं कर रहा है, बल्कि दिल्ली सरकार के सरकारी ख़ज़ाने से सब्सिडी देकर बिजली के बिल आधे करने की बात कर रहा है। यह सरकारी ख़ज़ाना कहाँ से आता है? यह आता है दिल्ली की आम जनता द्वारा दिये गये करों, शुल्कों आदि के ज़रिये। ऐसे में, अगर दिल्ली की ही जनता की जेब से पैसे निकाल कर सब्सिडी दी जाती है, तो दिल्ली की जनता को क्या मिला? यानी कि सब्सिडी जनता को नहीं बल्कि बिजली वितरण कम्पनियों यानी कि टाटा और अम्बानी को दी जा रही है! इसके अलावा, अगर सरकारी ख़ज़ाने का इतना बड़ा हिस्सा बिजली कम्पनियों को सब्सिडी के तौर पर दिया जाता है तो दिल्ली सरकार अपने अन्य ख़र्चों के लिए दिल्ली की जनता पर करों का बोझ बढ़ाने के लिए बाध्य होगी। उस सूरत में दिल्ली में महँगाई में बढ़ोत्तरी होगी। स्पष्ट है कि बिजली के बिलों को आधे करने के पीछे एक तुच्छ चार सौ बीसी छिपी हुई है।

दूसरी बात जो ग़ौर करने वाली है वह यह है कि दिल्ली सरकार के पास एक से दो महीने तक बिजली के बिलों पर सब्सिडी देने की धनराशि है। इसके बाद अगर वह बिजली के बिलों पर बिजली कम्पनियों को सब्सिडी देती है, तो वह अपने कर्मचारियों को वेतन देने की भी स्थिति में नहीं रहेगी। इस स्थिति से बचने के लिए केजरीवाल ने अपने चुनावी वायदे पर पलटी मारी और कहा कि सब्सिडी केवल 400 यूनिट तक ही दी जायेगी। सभी जानते हैं कि दिल्ली के एलआईजी मकान में रहने वाला एक निम्न मध्यवर्गीय परिवार भी गर्मियों में 400 यूनिट से ज़्यादा बिजली खपत करता है। ऐसे में, दिल्ली की करीब 40 से 50 प्रतिशत आबादी तो वैसे ही सब्सिडी के दायरे से बाहर हो गयी। चुनावों के पहले अरविन्द केजरीवाल ने 400 यूनिट की कोई शर्त सब्सिडी देने के लिए नहीं रखी थी। लेकिन इस पलटी से भी केजरीवाल सरकार बचने वाली नहीं है। ऐसे में, वह दो महीने बाद कोई

(पेज 13 पर जारी)

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में मज़दूर वर्ग के आन्दोलन के कुछ ज़रूरी राजनीतिक कार्यभार

पेज 11 से आगे)

न कोई नयी पलटी मारेगी जिससे कि बिजली कम्पनियों को सब्सिडी देने का बोझ कम हो सके।

तीसरी बात जो ग़ौर करने वाली है वह यह है कि केजरीवाल सरकार ने चुनावों के बाद एक और पलटी मारी। उसने कहा कि बिजली के बिल आधे करने के लिए सब्सिडी केवल तब तक दी जायेगी जब तक कि एनडीपीएल और बीएसईएस जैसी बिजली वितरण कम्पनियों का कैग द्वारा ऑडिट (खाता-जाँच) नहीं हो जाता है। यदि ऑडिट में यह सामने आता है कि ये बिजली कम्पनियाँ कोई भ्रष्टाचार नहीं कर रही हैं या उनका मुनाफ़ा जायज़ है, तो फिर यह सब्सिडी वापस ले ली जायेगी! ज्ञात हो कि दिल्ली राज्य स्वयं बिजली नहीं पैदा करता है और उसे बाहर से बिजली ख़रीदनी पड़ती है। ऐसे में, दिल्ली राज्य की निजी कम्पनियों द्वारा वितरण में जो ख़र्च आता है, उसके आधार पर एनडीपीएल और बीएसईएस के मुनाफ़े को जायज़ ही ठहराया जायेगा। वैसे भी कैग का कोई भी ऑडिट आज तक कॉरपोरेट विरोधी नहीं हुआ है। अगर कैग बिजली वितरण की कीमत में कुछ कमी की बात करेगा भी तो भी वह कमी मामूली होगी। यानी कि कुछ माह बाद केजरीवाल सरकार सब्सिडी हटा देगी और फिर बिजली के बिलों में 5-7 प्रतिशत कमी करेगी। यानी कि 50 प्रतिशत कमी करने का दावा 5 प्रतिशत कमी पर आकर ख़त्म होगा, और वह भी तब जब कि सर्वश्रेष्ठ स्थिति हो। एक साल बाद नतीजा यह भी हो सकता है कि दिल्ली की जनता को उससे भी ज़्यादा दरों पर बिजली का बिल देना पड़े जितना कि वह शीला दीक्षित की सरकार के तहत दे रही थी। वास्तव में, दिल्ली में बिजली के भयंकर बिलों से राहत देने का केवल एक ही रास्ता है और वह रास्ता है बिजली वितरण के निजीकरण की समाप्ति। पिछली बार के चुनावों के पहले 2014 में केजरीवाल ने एक बार दबे स्वर से कहा था कि अगर बिजली के बिलों का बोझ कम करने के लिए सरकार को वितरण का काम अपने हाथ में लेना पड़ा तो वह लेगी। लेकिन 2015 के चुनावों में केजरीवाल इस बात से पलट गया। इस बार उसने कहा कि हम बिजली वितरण के क्षेत्र को खुली प्रतिस्पर्द्धा के लिए खोल देंगे। इस प्रतिस्पर्द्धा में जीतेगी वही कम्पनी जो कि कम-से-कम दाम पर बिजली दे। लेकिन जो कम्पनी भी यह ठेका जीतेगी, वह मुनाफ़ा कमाने के लिए ही ठेका लेगी, न कि दिल्ली की जनता की सेवा के लिए! ज़ाहिर है, इससे बिजली के बिलों में कोई विशेष कमी नहीं आयेगी और अगर थोड़ी भी कमी आयी तो गुणवत्ता पर स्पष्ट रूप से प्रभाव पड़ेगा। ऐसे में, केजरीवाल सरकार बिजली के बिल के अपने 'फ्रॉड' को भी कुछ ही दिनों तक चला पायेगी और उसके बाद उसके पास नंगे तौर पर अपने वायदे से मुकरने के अलावा कोई रास्ता नहीं बचेगा। आख़िरी बात यह कि केजरीवाल सरकार ने जो सब्सिडी देने का वायदा किया है वह भी जनता को नहीं मिल रही है और अधिकांश लोगों के बिल बढ़े हुए आये हैं। एनडीपीएल और बीएसईएस के कार्यालयों के आगे अपने बिल कम करवाने वाले लोगों की लाइनें लगी हुई हैं। यानी कि जो जूठन मिलने की सम्भावना थी, वह भी झूठी निकली!

जहाँ तक 20 हज़ार लीटर मुफ्त पानी की बात है, तो उसमें भी कई बातें ग़ौर करने वाली हैं। चुनाव के पहले केजरीवाल सरकार ने यह नहीं बताया था कि जो घर 20 हज़ार लीटर प्रति माह से ज़्यादा पानी का उपभोग करता है, उस पर पहली यूनिट से शुल्क लगाया जायेगा। अभी भारी संख्या में दिल्ली के घर 20 हज़ार लीटर से ज़्यादा पानी का इस्तेमाल करते हैं, ऐसे में उन्हें सब्सिडी का कोई लाभ नहीं मिलने वाला है। दूसरी बात यह है कि 25 लाख से ज़्यादा घरों के पास अभी पानी का कनेक्शन ही नहीं है। पहले कनेक्शन लेने का शुल्क लगभग रुपये 3400 मात्र था। लेकिन अब केजरीवाल सरकार ने यह शुल्क बढ़ाकर करीब रुपये 11000 कर दिया है। यानी कि पहले तो वे 25 लाख घर इस भारी रकम को देकर कनेक्शन के लिए आवेदन करें। उसके बाद पानी की लाइन उन तक कब तक पहुँचेगी उसकी भी कोई गारण्टी नहीं दी गयी है। यानी कि केजरीवाल ने एक पक्के टुच्चे दुकानदार की तरह दिल्ली की जनता के साथ डण्डी मारके धोखाधड़ी का रास्ता अपनाया है। जनता को मिलेगा कुछ नहीं, उल्टे उसे नये कनेक्शन के लिए बढ़ी हुई रकम ही देनी पड़ेगी! साथ ही, 20 हज़ार लीटर के ऊपर पहले लीटर से भी बिल देना पड़ेगा। ये बातें चुनाव के पहले तो नहीं बतायीं गयीं थीं। चुनाव के बाद वायदों से मुकरने का केजरीवाल सरकार ने एक नायाब तरीक़ा निकाला है: हर वायदे के पीछे एक ऐसी पूर्वशर्त जोड़ दो जो पूरी न हो सके और इसके आधार पर वायदे से मुकर जाओ! ज़ाहिर है, यह तकनीक बहुत दिनों तक कारगर नहीं साबित होगी।

निष्कर्ष

हम देख सकते हैं कि नवउदारवाद और निजीकरण की मज़दूर-विरोधी नीतियों को लागू करने के मामले में केजरीवाल और आम आदमी पार्टी कहीं भी भाजपा और कांग्रेस से पीछे नहीं है। बल्कि, तात्कालिक तौर पर और कुछ समय के लिए केजरीवाल इस काम को ज़्यादा प्रभाविता से अंजाम दे सकता है। कारण यह कि वह अभी कांग्रेस और भाजपा जितना बेनक़ाब नहीं हुआ है, हालाँकि नंगे होने की उसकी रफ़्तार या दर कहीं ज़्यादा है। दूसरा कारण यह है कि केजरीवाल की राजनीति जिस उच्च नैतिक भूमि से शुरू हुई थी, यानी कि जिस तरह वह 'ईमानदारी' का बाजा बजाते हुए आयी थी, उससे वह पूरी तरह से ज़मीन पर नहीं गिरी है। दिल्ली की टुटपुँजिया और निम्न मध्यवर्गीय आबादी के एक हिस्से में काफ़ी हद तक टूटने के बावजूद अभी भी कुछ उम्मीद है और कांग्रेस और भाजपा से तुलना करते हुए देखने की प्रवृत्ति के कारण उनमें यह मानसिकता भी है कि अभी केजरीवाल सरकार के वायदों की पूर्ति का थोड़ा और इन्तज़ार कर लिया जाये। लेकिन यह भ्रम जिस गति से टूट रहा है, हम कह सकते हैं कि इसकी उम्र ज़्यादा से ज़्यादा एक साल है और ऐसा भी हो सकता है कि आने वाले छह-सात महीनों में ही दिल्ली में जगह-जगह आम आदमी पार्टी के नुमाइन्दों, नेताओं और मंत्रियों पर अण्डे-टमाटर फेंके जायें। कुछ मज़दूर इलाक़ों में यह प्रक्रिया शुरू हो चुकी है। इसका अन्य मज़दूर इलाक़ों और निम्न मध्यवर्गीय इलाक़ों तक पहुँचना भी वक़्त की बात है।

ज़ाहिर है, यह प्रक्रिया भी अपने आप नहीं घटित होगी। **जनता के बीच वायदा-ख़िलाफ़ी के कारण जो गुस्सा पैदा होगा वह एक निष्क्रिय गुस्सा या निष्क्रिय असन्तोष होगा। इस गुस्से और असन्तोष को, जो कि वस्तुगत तौर पर वायदा-ख़िलाफ़ी से पैदा होगा, एक सक्रिय रूप देना क्रान्तिकारी शक्तियों का काम है, मज़दूर वर्ग की हिरावल ताक़त का काम है।** इसके लिए, अरविन्द केजरीवाल और आम आदमी पार्टी की राजनीति और विचारधारा और साथ ही उसकी सरकार के मज़दूर-विरोधी चरित्र को हर क़दम पर बेनक़ाब करना होगा और स्पष्ट करना होगा कि अरविन्द केजरीवाल पूँजीवाद का नया दलाल है और मज़दूर वर्ग और आम मेहनतक़श जनता के साथ इसका कुछ भी साझा नहीं है। दिल्ली की मेहनतक़श जनता को बार-बार उसकी ठोस माँगों और 'आप' सरकार के वायदों की पूर्ति के प्रश्न पर जागृत, गोलबन्द और संगठित करना होगा। **यह समझने की ज़रूरत है कि अरविन्द केजरीवाल और 'आम आदमी पार्टी' एक अलग तौर पर पूँजीवाद की आख़िरी सुरक्षा पंक्तियों में से एक है। आख़िरी पंक्ति की भूमिका में संसदीय वामपंथ देश के पैमाने पर अस्थायी रूप से थोड़ा अप्रासंगिक हो गया है। व्यवस्था को एक नयी सुरक्षा पंक्ति की ज़रूरत थी और 'आम आदमी पार्टी' ने कम-से-कम अस्थायी तौर पर पूँजीवादी व्यवस्था की इस ज़रूरत को पूरा किया है और जनता का भ्रम व्यवस्था में बनाये रखने का काम किया है। लेकिन इसके बेनक़ाब होने के साथ निश्चित तौर पर मेहनतक़श जनता की राजनीतिक चेतना एक नये स्तर पर जायेगी और ऐसा लगता है कि यह नया स्तर गुणात्मक रूप से भिन्न और उन्नत होगा।** दिल्ली में और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में मौजूद मज़दूर वर्ग के लिए तो यह बात ख़ास तौर पर लागू होती है। इसलिए मज़दूर वर्ग के क्रान्तिकारी हिरावल ताक़तों को 'आम आदमी पार्टी' के बेनक़ाब होने की प्रक्रिया को देखते हुए बैठकर आनन्द नहीं लेना चाहिए। इसका अर्थ एक बहुत बड़े अवसर से चूकना होगा। उन्हें इस प्रक्रिया में एक उत्प्रेरक और एक अभिकर्ता की भूमिका निभानी चाहिए; उन्हें इसकी प्रतिक्रिया में पैदा होने वाले जनअसन्तोष को एक रचनात्मक और क्रान्तिकारी दिशा देने के लिए सचेतन प्रयास करने चाहिए; उन्हें मज़दूर वर्ग और आम मेहनतक़श जनता को उसकी ठोस माँगों पर और सरकारी वायदों को पूरा करने के लिए बार-बार गोलबन्द करना चाहिए और बार-बार सड़कों पर संगठित तौर पर उतारना चाहिए। कम-से-कम राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में मज़दूर वर्ग के क्रान्तिकारी हिरावल का यह एक केन्द्रीय कार्यभार है। जैसा कि माओ ने कहा था, "आकाश के नीचे हर चीज़ अस्त-व्यस्त है। एक शानदार स्थिति है।"

हम हार नहीं मानेंगे! हम लड़ना नहीं छोड़ेंगे!

(पेज 8 से आगे)

ख़ासियत है - यह भानमती के पिटारे जैसा एजेण्डा है (साफ़ तौर पर वर्ग संश्रयवादी एजेण्डा) जो छोटे व्यापारियों, धनी दुकानदारों, बिचौलियों और प्रोफ़ेशनल्स/ स्वरोज़गार वाले निम्न बुर्जुआ वर्ग के अन्य हिस्सों के साथ ही झुग्गीवासियों, मज़दूरों आदि की माँगों को भी शामिल करता है। यह अपने एजेण्डा की सभी माँगों को पूरा कर ही नहीं सकता, क्योंकि इन अलग-अलग सामाजिक समूहों की माँगें एक-दूसरे के बिल्कुल विपरीत हैं। आप की असली पक्षधरता दिल्ली के निम्न बुर्जुआ वर्ग के साथ है जो कि आप के दो महीने के शासन में साफ़ जाहिर हो चुका है। आप वास्तव में और राजनीतिक रूप से इन्हीं परजीवी नवधनाढ्डय वर्गों की पार्टी है। 'आम आदमी' की जुमलेबाजी सिर्फ़ कांग्रेस और भाजपा से लोगों के पूर्ण मोहभंग से पैदा हुए अवसर का लाभ उठाने के लिए थी। चुनाव होने तक यह जुमलेबाजी उपयोगी थी। जैसे ही लोगों ने आप के पक्ष में वोट दिया, किसी विकल्प के अभाव में, अरविन्द केजरीवाल का असली कुरूप फ़ासिस्ट चेहरा सामने आ गया।

आन्तरिक तौर पर भी, केजरीवाल धड़े और यादव-भूषण धड़े के बीच जारी सत्ता संघर्ष के चलते आप की राजनीति नंगी हो गयी है। इसका यह मतलब नहीं कि अगर यादव धड़े का वर्चस्व होता, तो दिल्ली के मेहनतकशों के लिए हालात कुछ अलग होते। यह गन्दी आन्तरिक लड़ाई आप के असली चरित्र को ही उजागर करती है और बहुत से लोगों को यह समझने में मदद करती है कि आप कोई विकल्प नहीं है और यह कांग्रेस, भाजपा, सपा, बसपा, सीपीएम जैसी पार्टियों से क़तई अलग नहीं है। ख़ासतौर पर, दिल्ली के मज़दूर इस सच्चाई को समझ रहे हैं। यही वजह है कि 25 मार्च को ही पुलिस बर्बरता और केजरीवाल सरकार के विरुद्ध दिल्ली के हेडगेवार अस्पताल के कर्मचारियों ने स्वत:स्फूर्त हड़ताल कर दी थी। दिल्ली मेट्रो रेल कारपोरेशन के मज़दूरों, अन्य अस्पतालों के ठेका मज़दूरों, ठेके पर काम करने वाले शिक्षकों, झुग्गीवासियों और दिल्ली के ग़रीब विद्यार्थियों और बेरोज़गार नौजवानों में गुस्सा सुलग रहा है। दिल्ली का मज़दूर वर्ग अपने अधिकार हासिल करने और केजरीवाल सरकार को उसके वादे पूरे करने के लिए बाध्य करने के लिए संगठित होने की शुरुआत कर चुका है। मज़दूरों को कुचलने की केजरीवाल सरकार की बौखलाहट भरी कोशिशें निश्चित तौर पर उसे भारी पड़ेंगी।

मज़दूर, छात्र और स्त्री संगठनों ने दिल्ली के विभिन्न मेहनतकश और ग़रीब इलाक़ों में अपना भण्डाफोड़ अभियान शुरू कर दिया है। अगर आप सरकार दिल्ली के ग़रीब मेहनतकशों से किये गये अपने वादे पूरे करने में नाकाम रहती है और हज़ारों स्त्रियों, मज़दूरों और छात्रों पर किये गये घृणित और बर्बर हमले के लिए माफ़ी नहीं माँगती है तो उसे दिल्ली के मेहनतकश अवाम के बहिष्कार का सामना करना होगा। 25 मार्च को हम पर, दिल्ली के मज़दूरों, स्त्रियों और युवाओं पर की गयी हरेक चोट इस सरकार की एक घातक भूल साबित होगी।

(लेखक 'मुक्तिकामी छात्रों-युवाओं का आह्वान' और 'मज़दूर बिगुल' के सम्पादक हैं)

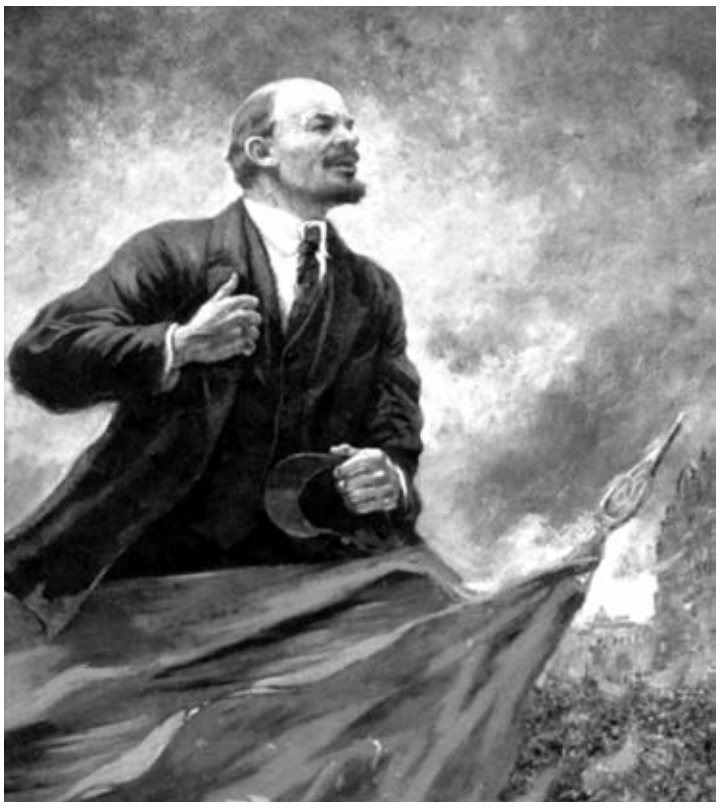

मज़दूरों के महान शिक्षक और नेता लेनिन के जन्मदिवस (22 अप्रैल) के अवसर पर

मज़दूरों के सबसे बुरे दुश्मन लफ़्फ़ाज़

● लेनिन

मैं सचमुच मउइंततें कम तपबीदमे (बहुतायत से परेशानी) अनुभव कर रहा हूँ और तय नहीं कर पा रहा हूँ कि 'स्वोबोदा' ने जो भ्रम पैदा किया है, उसे कहाँ से सुलझाना शुरू करुँ। अपनी बात में स्पष्टता लाने के लिए मैं एक मिसाल से शुरू करूँगा। जर्मनों को लीजिये। मैं आशा करता हूँ कि कोई इस बात से इंकार नहीं करेगा कि जर्मनों के संगठन ने भीड़ को समेट लिया है, उनके यहाँ हर चीज़ भीड़ से शुरू होती है और वहाँ के मज़दूर आंदोलन ने अपने पैरों पर चलना सीख लिया है। फिर भी जरा ध्यान दीजिये कि वहाँ यह लाखों और करोड़ों की भीड़ अपने 'एक दर्जन' परखे हुए राजनितिक नेताओं को कितना महत्व देती है और कितनी दृढ़ता से उनसे चिपटी रहती है! संसद में विरोधी पार्टियों के सदस्यों ने अकसर समाजवादियों को यह कह-कहकर ताने दिये हैं : "अच्छे जनवादी हैं आप लोग! आप लोगों का यह वर्ग का आंदोलन बस नाम भर का है, असल में तो साल-दर-साल नेताओं का वही पुराना गुट, वे ही बेबेल और लीब्नेख़्त जमे रहते हैं। पीढ़ियाँ गुजर जाती है और उनमें कोई परिवर्तन नहीं होता। आपके संसद-सदस्य – जिन्हें कहा जाता है कि मज़दूर चुनते हैं – बादशाह सलामत द्वारा नियुक्त किये गये अफ़सरों से ज़्यादा मुस्तक़िल हैं!" परन्तु "भीड़" को "नेताओं" से लड़ा देने, भीड़ में दूषित और महत्वाकांक्षी भावनाएँ जगाने और "एक दर्जन बुद्धिमानों" में जनता का विश्वास नष्ट करके आंदोलन की मज़बूती, स्थायित्व को ख़त्म करने की इन धूर्ततापूर्ण कोशिशों को देखकर जर्मन लोग केवल तिरस्कार से मुस्करा देते हैं। जर्मनों में राजनीतिक चिंतन काफ़ी विकसित हो चुका है और उन्होंने इतना ज़्यादा राजनीतिक अनुभव संचित कर लिया है कि वह यह समझने लगे हैं कि ऐसे "एक दर्जन" परखे हुए और प्रतिभाशाली नेताओं के बिना (और प्रतिभाशाली लोग सैकड़ों की संख्या में नहीं पैदा होते), जिन्हें अपने काम की पूरी प्रशिक्षा मिल चुकी हो, जो दीर्घकाल तक अनुभव प्राप्त कर चुके हों और जो पूर्ण सहयोग और ताल-मेल के साथ काम करते हों, आधुनिक समाज में कोई वर्ग दृढ़ता के साथ संघर्ष नहीं कर सकता। जर्मनों के बीच भी ऐसे लफ़्फ़ाज़ हुए हैं, जिन्होंने "सौ मूर्खों" की ख़ुशामद की हैं, उन्हें "एक दर्जन बुद्धिमानों" से ऊँचा स्थान दिया है, जनता के "ज़बरदस्त घूँसों" का गुणगान किया है और (मोस्ट और हैस्सेलमैन की तरह) उसे विवेकहीन "क्रान्तिकारी" कार्य करने के लिए उकसाया है और दृढ़ तथा स्थिर-चित नेताओं के प्रति अविश्वास पैदा किया है। समाजवादी आंदोलन में पाये जाने वाले ऐसे तमाम लफ़्फ़ाज़ तत्वों के ख़िलाफ़ दृढ़तापूर्वक और निर्ममतापूर्वक संघर्ष करके ही जर्मन समाजवाद पनप सका है और आज की यह विराट शक्ति बन सका है। लेकिन आज जब रूस का सामाजिक जनवाद केवल इसलिए संकट से गुजर रहा है कि उसके पास अपने आप जागृत होती हुई जनता का नेतृत्व करने के लिए पर्याप्त संख्या में प्रशिक्षित, विकसित एवं अनुभवी नेता नहीं हैं, तब हमारे ये अक्ल के ठेकेदार मूर्खों जैसी गंभीरता के साथ चीख-चीखकर कहते हैं : "जब आंदोलन की जड़ें आम लोगों में नहीं होती, तब बुरा हाल होता है!"

"विद्यार्थियों की समिति किसी काम की नहीं होती, उसमें स्थायित्व नहीं होता।" यह बिलकुल सच बात है। परन्तु इससे जो नतीजा निकालना चाहिए, वह यह है कि हमें पेशेवर क्रान्तिकारियों की समिति बनानी चाहिए और इससे कोई अंतर नहीं पड़ता कि पेशेवर क्रान्तिकारी बनने की क्षमता किसी विद्यार्थी में है या मज़दूर में। लेकिन आप लोग इससे यह नतीजा निकालते हैं कि मज़दूर आंदोलन को बाहर से धक्का नहीं देना चाहिए! अपने राजनीतिक भोलेपन के कारण आप यह नहीं देखते कि आप लोग हमारे अर्थवादियों के हाथों में खेल रहे हैं और हमारे नौसिखुएपन को बढ़ावा दे रहे हैं। मैं पूछता हूँ कि हमारे विद्यार्थियों ने हमारे मज़दूरों को किस अर्थ में "धक्का दिया"? केवल इस अर्थ में कि विद्यार्थियों के पास स्वयं जो थोड़ा-बहुत राजनीतिक ज्ञान था, समाजवादी विचार के जो चंद टुकड़े उन्होंने जमा कर लिये थे (क्योंकि आजकल के विद्यार्थियों का मुख्य बौद्धिक भोजन – क़ानूनी मार्क्सवाद – उन्हें केवल प्रारम्भिक ज्ञान या ज्ञान के चंद टुकड़े ही दे सकता है), उन्हें वे मज़दूरों तक ले गये थे। इस प्रकार का "बाहर से धक्का देना" कभी बहुत ज़्यादा नहीं हुआ है, इसके विपरीत अभी तक हमारे आंदोलन में यह बात बहुत कम, बहुत ही कम देखने में आई है, क्योंकि हम लोग सदा अपने घोंघे के अन्दर ही बंद पड़े रहे हैं, हम "मालिकों तथा सरकार के ख़िलाफ़" प्राथमिक "आर्थिक संघर्ष" की पूजा दासों की तरह हद से ज़्यादा करते रहे हैं। हम, पेशेवर क्रान्तिकारी, इसे अपना फर्ज़ समझते हैं और समझेंगे कि अभी तक हमने इस प्रकार के जितने "धक्के बाहर से दिये" हैं, उससे सौ गुना ज़्यादा "धक्के" दें। लेकिन इसी एक बात से कि आपने "बाहर से धक्का देना" जैसी घृणित शब्दावली का प्रयोग किया है – जिन शब्दों से मज़दूरों में (कम से कम उन मज़दूरों में, जो उतने ही पिछड़े हुए है, जितना कि आप लोग) लाज़िमी तौर पर उन सभी लोगों के प्रति अविश्वास का भाव पैदा होगा, जो उनके पास बाहर से राजनीतिक ज्ञान और क्रान्तिकारी अनुभव ले जाते हैं और इससे मज़दूरों में ऐसे तमाम लोगों का विरोध करने की सहज प्रवृति उत्पन्न होगी – यह साबित हो जाता है कि आप लोग लफ़्फ़ाज़ हैं और लफ़्फ़ाज़ लोग मज़दूर वर्ग के सबसे बुरे दुश्मन होते हैं।

जी हाँ! और अब मेरे "बन्धुत्वहीन तरीके" से बहस करने का रोना मत शुरू कर दीजियेगा। मैं आपके इरादों की पवित्रता पर सपने में भी संदेह नहीं करता। जैसे मैं कह चुका हूँ, आदमी केवल राजनीतिक भोलेपन के कारण भी लफ़्फ़ाज़ बन सकता है। परन्तु मैंने साबित कर दिया है कि आप लोग लफ़्फ़ाज़ी पर उतर आये हैं और यह कहने में मैं कभी नहीं थकूंगा कि लफ़्फ़ाज़ मज़दूर वर्ग के सबसे बुरे दुश्मन होते हैं। सबसे बुरे दुश्मन इसलिए कि वे लोग भीड़ की बुरी प्रवृतियों को बढ़ावा देते हैं और पिछड़ा हुआ मज़दूर यह नहीं पहचान पाता कि ये लोग, जो अपने को मज़दूरों का मित्र बताते हैं और कभी-कभी ईमानदारी के साथ पेश आते हैं, असल में उनके दुश्मन हैं। सबसे बुरे दुश्मन इसलिए कि फूट और ढुलमुल-यक़ीनी के ज़माने में, जब हमारे आंदोलन की रूपरेखा अभी गढ़ी ही जा रही है, तब लफ़्फ़ाज़ी के ज़रिए भीड़ को गुमराह करने से ज़्यादा आसान और कोई बात नहीं है, और भीड़ को अपनी ग़लती बहुत बाद में अत्यंत कटु अनुभव से ही मालूम होती है। यही कारण है कि आज रूस के प्रत्येक सामाजिक-जनवादी कार्यकर्ता के लिए यह नारा होना चाहिए : 'स्वोबोदा' और 'राबोचेये देलो' के ख़िलाफ़ डटकर लड़ो, क्योंकि वे दोनों ही गिरकर लफ़्फ़ाज़ी के स्तर पर आ गये हैं (इस बारे में ज़्यादा विस्तार में हम आगे चर्चा करेंगे, यहाँ हम केवल इतना कह दें कि "बाहर से धक्के देना" तथा संगठन के प्रश्न पर 'स्वोबोदा' के दूसरे उपदेशों के बारे में हमने जो कुछ कहा है, वह सभी अर्थवादियों पर पूरी तरह लागू होता है, जिनमें 'राबोचेये देलो' के समर्थक भी आ जाते हैं, कारण कि उन्होंने संगठन के विषय में या तो ऐसे विचारों का सक्रिय रूप में प्रचार और समर्थन किया है, या वे उनमें बह गये हैं।

"सौ मूर्खों के मुक़ाबले एक दर्जन बुद्धिमानों का सफ़ाया करना ज़्यादा आसान है।" यह विलक्षण सत्य (जिसके लिए सौ मूर्ख सदा आपकी प्रशंसा करेंगे) आपको इतना स्पष्ट केवल इसलिए लगता है कि तर्क करते-करते आप यकायक एक प्रश्न को छोड़ दूसरे प्रश्न पर पहुंच गये हैं। आपने जिस बात की चर्चा शुरू की थी और जिसकी चर्चा अब भी कर रहे हैं, वह है एक "समिति" अथवा "संगठन" का सफ़ाया हो जाने की बात, और अब आप यकायक "गहराई" में आंदोलन की "जड़ों" का सफ़ाया होने के प्रश्न पर पहुँच गये हैं। ज़ाहिर है कि हमारे आंदोलन को मिटाना इसलिए असंभव है क्योंकि उसकी सैकड़ों और लाखों जड़ें जनता में बहुत गहराई तक पहुँच चुकी हैं, परन्तु इस समय चर्चा का विषय यह नहीं है। जहाँ तक "गहरी जड़ों" का प्रश्न है, तो आज भी, हमारे तमाम नौसिखुएपन के बावजूद, कोई हमारा "सफ़ाया" नहीं कर सकता, फिर भी हम यह शिकायत करते हैं और शिकायत किये बिना नहीं रह सकते कि "संगठनों" का सफ़ाया हो जाता है और उसके परिणामस्वरूप आंदोलन का क्रम बनाये रखना असंभव हो जाता है। लेकिन आपने चूँकि संगठनों का सफ़ाया हो जाने का सवाल उठाया है और इस सवाल पर आप अड़े रहना ही चाहते हैं, इसलिए मैं ज़ोर देकर कहता हूँ कि सौ मूर्खों की तुलना में एक दर्जन बुद्धिमानों का सफ़ाया करना कहीं ज़्यादा मुश्किल है। और आप भीड़ को मेरे "जनवाद विरोधी" विचारों, आदि के ख़िलाफ़ चाहे जितना भी भड़कायें, पर मैं सदा इस प्रस्थापना की पैरवी करूँगा। जैसा कि मैं बार-बार कह चुका हूँ, संगठन के सम्बन्ध में "बुद्धिमानों" से मेरा मतलब पेशेवर क्रान्तिकारियों से है। उसमें इससे कोई अंतर नहीं पड़ता कि उनको विद्यार्थियों के बीच में से प्रशिक्षित किया गया है या मज़दूरों में से। मैं ज़ोर देकर यह कहता हूँ : (1) नेताओं में एक स्थायी और आंदोलन का क्रम बनाये रखने वाले संगठन के बिना कोई भी क्रान्तिकारी आंदोलन टिकाऊ नहीं हो सकता; (2) जितने अधिक व्यापक पैमाने पर जनता स्वयंस्फूर्त ढंग से संघर्ष में खिंचते हुए आंदोलन का आधार बनेगी और उसमें भाग लेगी, ऐसा संगठन बनाना उतना ही ज़्यादा ज़रूरी होता जायेगा, और इस संगठन को उतना ही अधिक मज़बूत बनना होगा (क्योंकि जनता के अधिक पिछड़े हुए हिस्सों को गुमराह करना लफ़्फ़ाज़ों के लिए ज़्यादा आसान होता है); (3) इस प्रकार के संगठन में मुख्यत: ऐसे लोगों को होना चाहिए, जो अपने पेशे के रूप में क्रान्तिकारी कार्य करते हों; (4) निरंकुश राज्य में इस प्रकार के संगठन की सदस्यता को हम जितना ही अधिक ऐसे लोगों तक सीमित रखेंगे, जो अपने पेशे के रूप में क्रान्तिकारी कार्य करते हों और जो राजनीतिक पुलिस को मात देने की विद्या सीख चुके हों, ऐसे संगठन का "सफ़ाया करना" उतना ही अधिक मुश्किल होगा; और (5) मज़दूर वर्ग तथा समाज के अन्य वर्गों के उतने ही अधिक लोगों के लिए यह सम्भव हो सकेगा कि वे आंदोलन में शामिल हों और उसमे सक्रिय काम करें।

(लेनिन की रचना 'क्या करें?' के अध्याय 'नौसिखुएपन के बारे में' से एक अंश)

बेर्टोल्ट ब्रेष्ट की तीन कविताएँ

कसीदा इंक़लाबी के लिए

अक्सर वे बहुत अधिक हुआ करते हैं
वे ग़ायब हो जाते, बेहतर होगा।
लेकिन वह ग़ायब हो जाये, तो उसकी कमी खलती है।

वह संगठित करता है अपना संघर्ष
मजूरी, चाय-पानी
और राज्यसत्ता की ख़ातिर।
वह पूछता है सम्पत्ति से :
कहाँ से आई हो तुम?

जहाँ भी ख़ामोशी हो
वह बोलेगा
और जहाँ शोषण का राज हो
और क़िस्मत की बात की जाती हो
वह उँगली उठायेगा।

जहाँ वह मेज पर बैठता है
छा जाता है असन्तोष मेज पर
ज़ायका बिगड़ जाता है
और कमरा तंग लगने लगता है।

उसे जहाँ भी भगाया जाता है,
विद्रोह साथ जाता है और जहाँ से उसे भगाया जाता है
असन्तोष रह जाता है।

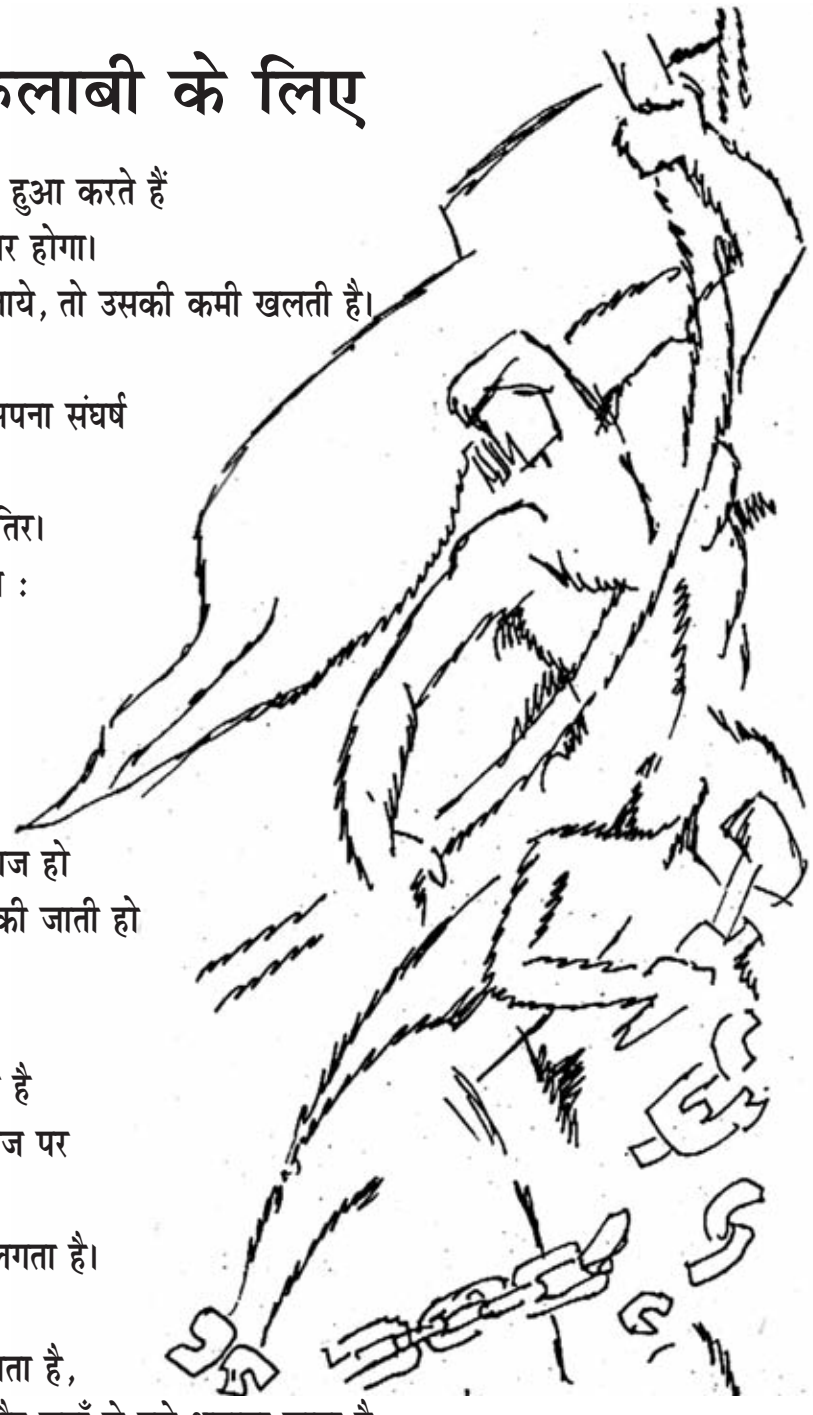

कसीदा द्वंद्ववाद के लिए

बढ़ती जाती है नाइन्साफ़ी आज सधे क़दमों के साथ।
ज़ालिमों की तैयारी है दस हज़ार साल की।
हिंसा ढाढ़स देती है : जैसा है, रहेगा वैसा ही।
सिवाय हुक़्मरानों के किसी की आवाज़ नहीं
और बाज़ार में लूट की चीख :
शुरुआत तो अब होनी है।
पर लूटे जाने वालों में से बहुतेरे कहने लगे हैं
जो हम चाहते हैं वो कभी होना नहीं।
गर ज़िन्दा हो अब तलक़, कहो मत : कभी नहीं
जो तय लगता है, वो तय नहीं है।
जैसा है, वैसा नहीं रहेगा।
जब हुक़्मरान बोल चुके होंगे
बारी आयेगी हुक़्म निभाने वालों की।
किसकी हिम्मत है कहने की : कभी नहीं?
ज़िम्मेदार कौन है, अगर लूट जारी है? हम ख़ुद।
किसकी ज़िम्मेदारी है कि वो ख़त्म हो? ख़ुद हमारी।
जिसे कुचला गया उसे उठ खड़े होना है।
जो हारा, उसे लड़ते रहना है।
अपनी हालत जिसने पहचानी, रोकेगा कौन उसे?
फिर आज जो पस्त हैं कल होगी उनकी जीत
और कभी नहीं के बजाय गूँजेगा : आज अभी।

कसीदा कम्युनिज़्म के लिए

यह तर्कसंगत है, हर कोई इसे समझता है। यह आसान है।
तुम तो शोषक नहीं हो, तुम इसे समझ सकते हो।
यह तुम्हारे लिए अच्छा है, इसके बारे में जानो।
बेवक़ूफ इसे बेवक़ूफी कहते हैं और गन्दे लोग इसे गन्दा कहते हैं।
यह गन्दगी के ख़िलाफ़ है और बेवक़ूफी के ख़िलाफ़।
शोषक इसे अपराध कहते हैं।
लेकिन हमें पता है :
यह उनके अपराध का अन्त है।
यह पागलपन नहीं
पागलपन का अन्त है।
यह पहेली नहीं है
बल्कि उसका हल है।
यह तो आसान सी चीज़ है
जिसे हासिल करना मुश्किल है।

बेर्टोल्ट ब्रेष्ट (1898-1956) : जर्मनी के प्रसिद्ध मार्क्सवादी साहित्य चिन्तक, नाटककार और कवि।

डाक पंजीयन : SSP/LW/NP-319/2014-2016
प्रेषित डाकघर : आर.एम.एस. चारबाग, लखनऊ
प्रेषित तिथि : दिनांक 20 प्रत्येक माह

मोदी सरकार का भूमि अधिग्रहण अध्यादेश

किसानों के जनवादी अधिकारों पर तीखा हमला

विगत दिनों सुप्रीम कोर्ट के जनता के दमन द्वारा देसी-विदेशी पूँजीपतियों के जमीनें दोनों हाथों से लुटाने के लिए मोदी सरकार अति-उत्साहित है। इसके लिए यह कांग्रेस के नेतृत्व वाली पिछली केन्द्र सरकार द्वारा बनाए कानून 'वाजिब मुआवजे का अधिकार और भूमि अधिग्रहण और पुनर्वास में पारदर्शिता के बारे में कानून-2013' में संशोधन करके जनता खासकर किसानों की भूमि को और भी बड़े स्तर पर और ज्यादा दमनकारी व गैरजनवादी तौर-तरीकों के द्वारा छीनने का बन्दोबस्त कर रही है। इससे सम्बन्धित अध्यादेश 'वाजिब मुआवजे का अधिकार और भूमि अधिग्रहण और पुनर्वास में पारदर्शिता के बारे (संशोधन) अध्यादेश-2014' तो 31दिसम्बर 2014 को ही जारी कर दिया गया था लेकिन इसको संसद में पास करवाना जरूरी था। हम जानते हैं कि सभी सांसदीय पार्टियाँ भूमि देसी-विदेशी पूँजीपतियों को देने के लिए कानूनी-गैरकानूंनी दमनकारी ढंग-तरीके अपनाने पर आपसी सहमति रखती हैं। लेकिन वोट राजनीति के आपसी अन्तरविरोधों के चलते कांग्रेस, समाजवादी पार्टी, आम आदमी पार्टी, राष्ट्रीय जनता दल, माकपा-भाकपा और ''वाम'' मोर्चे की अन्य सांसदीय पार्टियाँ, संसद में और ''सड़क पर'' मोदी सरकार द्वारा लाए गए नये कानून का ''विरोध'' कर रही हैं। विभिन्न संसदीय पार्टिया और क्रान्तिकारी गुटों/पार्टियों से सम्बन्धित किसान संगठन बड़े-बड़े रोष-प्रदर्शन कर रहे हैं। इस कानून के ख़िलाफ़ किसानों में गुस्सा इतना अधिक है कि मोदी सरकार को इससे सम्बन्धित काफी सफ़ाई देनी पड़ रही है और लोक सभा में पेश अध्यादेश में कुछ संशोधन करने पड़े हैं। नौ संशोधनों के साथ लोकसभा में अध्यादेश पास हो चुका था लेकिन राज्य सभा में मोदी सरकार के पास बहुमत नहीं है इसलिए वहाँ यह कानून पारित हो पाना सम्भव नहीं था। 5 अप्रेल को इस अध्यादेश की छः महीने की अवधि खत्म होने से पहले ही सरकार ने राज्य सभा का सत्र उठा दिया। सरकार अब नया अध्यादेश ला सकती है जिसमें नौ संशोधन शामिल हो सकते हैं।

अंग्रेज़ हकूमत ने भूमि अधिग्रहण कानून-1894 में बनाया था। तब भी भूमि छीनने के लिए बहाना सार्वजनिक हितों को ही बनाया गया था। इस कानून के मुताबिक भूमि ग्रामीण विकास, ग्रामीण कल्याण, स्कूल, अस्पताल या अन्य सरकारी कार्यों के लिए अधिग्रहित की जा सकती थी। इस कानून के अन्तर्गत किसी निजी कम्पनी के लिए सिर्फ उसमें काम करते मज़दूरों की रिहायश के लिए भूमि अधिग्रहित की जा सकती थी। 1947 के बाद भारतीय हुक्मरानों ने इसमें कई बार संशोधन किए हैं। भारत में ज़ारी पूँजीवादी विकास की ज़रूरतों के मद्देनज़र 1894 का कानून उपयुक्त नहीं रह गया था। भारत के पूँजीपति वर्ग को बड़े स्तर पर भूमि की ज़रूरत थी और इस ज़रूरत की पूर्ति दमन के औज़ारों को तीखा किये बगैर नहीं हो सकती

थी। अंग्रेज़ हकूमत और भारतीय हुक्मरानों ने चाहे अनेकों चोर-रास्तों के द्वारा पूँजीपतियों के लिए भूमि अधिग्रहण को बड़े-स्तर पर अंजाम दिया है लेकिन इस कानून में शामिल सार्वजनिक हितों की परिभाषा काफी रुकावट पैदा करती थी। आगे चलकर 1984 में भारतीय हुक्मरानों ने इसमें एक और धारा जोड़ दी कि आपातकालीन परिस्थिति में 15 दिनों की सूचना द्वारा सरकार या निजी कम्पनी के लिए भूमि अधिग्रहण किया जा सकेगा।

लेकिन भारतीय हुक्मरान भूमि अधिग्रहण को और सरल एवं व्यापक बनाना चाहते थे। इसलिए इससे पहले की कांग्रेस के नेतृत्व वाली केन्द्र सरकार के समय 'वाजिब मुआवजे का अधिकार और भूमि अधिग्रहण और पुनर्वास में पारदर्शिता के बारे में कानून-2013' लाया गया। इससे पहले अंगज़ी गुलामी के समय से लागू भूमि अधिग्रहण कानून-1894 खिलाफ़ जनता में काफ़ी गुस्सा था। सन् 2013 के कानून द्वारा भारतीय हुक्मरान एक तो यह दिखाना चाहते थे कि अब अंग्रेजों वाला कानून लागू नहीं होगा। नये कानून पर जनपक्षीय-किसान पक्षीय मुखौटा डाल कर जनता के गुस्से को कम करने की कोशिश की गई। 2013 को भूमि पर कब्जा करवाने के लिए किसी आपातकालीन परिस्थिति से सम्बन्धित धारा की ज़रूरत अब नहीं रह गई थी।

सन् 2013 के कानून के कुछ पक्षों को जनपक्षधर कहकर प्रचार किया गया। इस कानून के मुताबिक निजी कम्पनी के लिए भूमि अधिग्रहण करने के लिए कम से कम 80 प्रतिशत और सार्वजनिक-निजी भागीदारी कम्पनी के लिए 70 प्रतिशत प्रभावित ज़मीन मालिकों की सहमति ज़रूरी थी। सम्बन्धित इलाकों की ग्राम पंचायत, नगर पालिका या नगर निगम के साथ विचार-विमर्श द्वारा, प्रोजेक्ट के 'सामाजिक प्रभावों के बारे में जायजा रिपोर्ट' और इन प्रभावों के प्रबन्धन के बारे रिपोर्ट तैयार करने, इस आधार पर सार्वजनिक सुनवाई करना और माहिरों के एक ग्रुप से राय लेना, सिंचाई के नीचे की और बहुफसली भूमि अधिग्रहिकत करने से पहले भोजन सुरक्षा यकीनी बनाने के लिए उचित कदम उठाने, फिर पुनर्वास सम्बन्धी रिपोर्ट तैयार करना आदि चीजों को इस कानून के मानवीय पक्षों के तौर पर पेश किया गया।

वास्तव में इन ''मानवीय पक्षों'' का कोई फायदा जनता को नहीं होना था। सन 2013 के कानून की धारा 40 के अन्तर्गत किसी भी प्रोजैक्ट को ''अति-जरूरी'' कहकर कानून के उपरोक्त ''मानवीय पक्षों'' को रद्द करने का पुख्ता इंतजाम किया गया था। दूसरा सामाजिक प्रभावों के बारे जायज़ा और प्रबन्धन रिपोर्टों और सार्वजनिक सुनवाई, माहिरों की राय मानना या न मानना अफसरशाही पर निर्भर है। अफसरशाही पूँजीपतियों और उनके राजनीतिक नेतायों की मानती है या जनता की यह हम सभी जानते हैं। बहुसंख्यक ज़मीन मालिकों की सहमति वाला पक्ष भी जनवादी नहीं बल्कि गैर-जनवादी है। यदि कोई एक जमीन मालिक भी अपनी ज़मीन नहीं देना चाहता तो उससे भूमि जबरन नहीं छीनी जानी चाहिए। भूमि बेचना या न बेचना, किस कीमत पर बेचना, यह खरीदने-बेचने वाले की सहमति पर निर्भर होना चाहिए। खरीददार चाहे सरकार हो और चाहे निजी पूँजीपति। सन् 2013 के कानून में यह दर्ज था (जो अब भी बदला नहीं गया) कि ग्रामीण क्षेत्र में अधिग्रहित की जाने वाली ज़मीन के लिए इलाके में उस समय रजिस्ट्री वाली कीमतों की औसत से चार गुणा कीमत दी जायेगी और शहरी क्षेत्र में दो गुणा। इस पक्ष को भी बहुत जनपक्षधर बनाकर पेश किया गया। हम जानते हैं कि रजिस्ट्रियाँ बाज़ारी की कीमत से काफी कम कीमतों पर होती हैं। इसलिए कानून का यह पक्ष भी जनवादी नहीं कहा जा सकता। मोदी सरकार की तरफ से भी इस चीज को जन हितैषी -किसान हितैषी कहकर प्रचारित किया जा रहा है।

अब मोदी सरकार सन् 2013 के कानून को बदल कर और भी दमनकारी कानून लागू करना चाहती है। मोदी सरकार के लोक सभा में पारित अध्यादेश में पाँच प्रोजेक्टों के लिए ज़मीन मालिकों की पहले सहमति लेने, सामाजिक प्रभावों और उनके प्रबन्धन के बारे में रिपोर्ट तैयार करने, सार्वजनिक सुनवाई और माहिर ग्रुपों से जांच-पड़ताल करवाने, भोजन सुरक्षा यकीनी बनाने की शर्तों को हटा दिया गया है। यह पाँच प्रोजेकट हैं - (1) जो प्रोजैकट राष्ट्रीय सुरक्षा, भारत या इसके किसी क्षेत्र की रक्षा, रक्षा की तैयारी और रक्षा सम्बन्धी उत्पादन के लिए ज़रूरी हैं। (2) ग्रामीण बुनियादी ढाँचा समेत बिजलीकरण के, (3) मकान (सहनीय कीमतों पर व गरीब जनता के लिए) निर्माण। (4) औद्योगिक गलियारे। इनके लिए रेलवे लाईनों और राज्य मार्गों की दोनों ओर एक-एक किलोमीटर तक भूमि अधिग्रहण की जा सकेगी। (5) बुनियादी ढाँचे से सम्बन्धि प्रोजैक्ट जिसमें सार्वजनिक-निजी भागीदारी के ऐसे प्रोजैक्ट भी शामिल होंगे, जिनकी मालिक केन्द्र सरकार होगी। सार्वजनिक-निजी भागीदारी के अन्तर्गत आने वाले स्कूल, अस्पताल, सड़कें, नहरें आदि सामाजिक विकास के प्रेजेक्ट इसमें शामिल नहीं होंगे। बाकी सार्वजनिक-निजी भागीदारी वाले प्रोजेक्टों के लिए उपरोक्त छूटें लागू होंगी।

मोदी सरकार की तरफ से उपरोक्त संशोधनों द्वारा सरकार द्वारा भूमि अधिग्रहण को और अधिक दमनकारी और तेज़ तो बनाया ही जा रहा है, साथ ही ''अति-ज़रूरी'' आपातकालीन परिस्थिति वाली धारा 40 को कायम भी रखा जा रहा है। 2013 के कानून के मुताबिक यदि अधिग्रहित की गई भूमि मिलने पर पाँच सालों के भीतर तय किये गये काम के लिए भूमि प्रयोग में नहीं लाई जाती तो यह पहले मालिकों को दे दी जायेगी या सरकार के ''भूमि बैंक'' के पास चली जायेगी। यह पाँच साल के समय वाली शर्त अब हटा दी गई है। सरकार की मर्ज़ी होगी कि वह इस बारे कितना समय तय करे। पहले के कानून में यह दर्ज था कि भूमि अधिग्रहण सम्बन्धी यदि किसी सरकारी विभाग द्वारा गलत जानकारी, झूठे दस्तावेज, दुर्भावना की कोई कार्यवाही सिद्ध होती है तो उस विभाग के मुख्य अधिकारी को दोषी माना जायेगा और उसके खिलाफ मुकदमा चलाया जायेगा। दोष सिद्ध होने पर छह महीनो की कैद या एक लाख रुपए का जुर्माना या दोनों हो सकते थे। ऐसी चीजें कितनी लागू होती हैं हम सभी जानते हैं लेकिन मोदी सरकार अफसरशाही का और बचाव करना चाहती है। यह संशोधन किया गया है कि विभाग के जिस अफसर या मुलाजिम के पास से गलत

(पेज 2 पर जारी)

मुद्रक, प्रकाशक और स्वामी कात्यायनी सिन्हा द्वारा 69 ए-1, बाबा का पुरवा, निशातगंज, लखनऊ-226006 से प्रकाशित एवं उन्हीं के द्वारा मल्टीमीडियम, 310, संजय गांधीपुरम, फ़ैज़ाबाद रोड, लखनऊ से मुद्रित। सम्पादक : सुखविन्दर, अभिनव ● सम्पादकीय पता : 69 ए-1, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006